

अथमानवगृह्यसूत्रप्रस्ताविका

यह मानवगृह्यसूत्र कृष्णयजुर्वेद की २६ शाखाओं में से एक शाखा का सूत्र है। इस के भाषानुवाद में जिन २ मन्त्रों की प्रतीकें दी हैं वे मन्त्र मैत्रायणी शाखा में मिलेंगे। और जो पूरे २ लिखे हैं वे सब अन्य वेद शाखाओं के मन्त्र हैं। क्योंकि सभी गृह्य श्रौत कल्पसूत्रकारों की यह शैली ही है कि वे अपनी शाखा के मन्त्रों की प्रतीकें रखते तथा अन्य शाखाओं के जिन मन्त्रों की लेना चाहते हैं उन को सूत्रों के साथ पूरे २ उर्षों के रूपों लिख देते हैं। वेद के छः अङ्गों में एक कल्प भी प्रधान वेदाङ्ग है। छः अङ्गों में वेद के तीन अङ्ग प्रधान हैं। व्याकरण निरुक्त और कल्प ये ही तीनों कठिन भी हैं। इन तीन में भी व्याकरण मुख्य है इसी लिये (मुख्य व्याकरणं स्मृतम्) कहा है। इन्हीं तीन अङ्गों के पढ़ने जानने से वेदार्थ धरने समझने की योग्यता हो सकती है। इस कल्प नामक अङ्ग को ऋषियों ने वेद के (हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते) द्वाय कहा है। यह वेद का कल्प अङ्ग गृह्य और श्रौत दो भागों में विभक्त है। जैसे हाथों के बिना मनुष्य अपने सुखार्थ कुछ काम नहीं कर सकता वैसे ही कल्प के बिना खाली वेद को देखने जानने वाला अपने हितार्थ वेदोक्त कर्म कुछ नहीं कर सकता। और कर्म द्वारा ही मनुष्य का दृष्ट सिद्ध हो सकता है इस लिये वेद के कल्पाङ्ग का पढ़ना देखना जानना इन को अपना दृष्ट साधनार्थ अत्यावश्यक है। गृह्य श्रौत दोनों प्रकार के प्रत्येक शाखा के साथ भिन्न २ हजारों कल्प सूत्र पूर्व काल में थे जो कालवश अधिकांश लुप्त हो गये। इस वेद के कल्पाङ्ग के साथ ही जैनिनि आचार्य के बनाये पूर्वमीमांसा शास्त्र का बड़ा सम्बन्ध है। कल्पाङ्ग की रीति धांति को जो नहीं जानता वह पूर्व मीमांसा शास्त्र की भी नहीं समझ सकता। इन गृह्य श्रौत दोनों प्रकार के कल्प सूत्रों में गृह्य की अपेक्षा श्रौत कठिन है क्योंकि श्रौत को भाषा टीका होने पर भी समझना कठिन है। सम्प्रति कोई रोक टोक न होने से जो लोग कल्प वेदाङ्ग शास्त्र का कुछ भी समझ नहीं जानते वे भी लाभ वश हो २ कर इन में किसी २ गृह्य सूत्रादि का भाषानुवाद कर २ यत्र तत्र प्रकाशित करने को तत्पर हो गये हैं इस से और भी अधिक २ अज्ञान तथा अनर्थ फैलने की सम्भावना है। ईश्वर ही रक्षा करेगा। इसी मैत्रायणी शाखा का मानव कल्प श्रौतसूत्र की मिलता है जो कलकत्ता में पहिले ही छप चुका है। जिस का पता कहीं २

हमने इस गृह्यसूत्र के भाषाटीका में भी दिया है। ये दोनों मानव कल्प गृह्य श्रौतसूत्र एक ही आचार्य के बनाये हैं परन्तु यह मानव गृह्यसूत्र जहाँ तक हमें ज्ञात है अब तक भारतवर्ष में नहीं दया था। यदि कहीं कृपा भी हो तो भाषाटीका न होने से इस को सर्वसाधारण मनुष्य लेकर देख नहीं सकते थे। यह ग्रन्थ रूस का कृपा (लग्नोहन धर्मा-ग्रान देइपार। डाक कपिया जि० वस्ती से) हमें भिला है। उस लिये हमने इस को भाषा-टीका करके कृपादिया है।

हमारे पाठक लोग मानव धर्म शास्त्र [जो मनुस्मृति के नाम से प्रसिद्ध है जिस का द्वितीय नाम भृगुप्रोक्त संहिता भी है] को जानते ही हैं। वेदादि शास्त्रों की मर्यादा जानने वाले ब्राह्मणादि को यह भी विदित है कि पूर्व नीमांसाकार जैमिनि आचार्य ने जिस वेदीक्त मनातन धर्म का लक्षण (चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः) सूत्र से किया है उस धर्म का ठीक २ पता संस्कृत के विद्वानों को इहाँ कल्प सूत्रों के पढ़ने देखने विचारने से लगता है। अर्थात् श्रुतियों में कहे धर्म को ठीक २ करने की रीति भांति समझाने के लिये प्रथम श्रौत तथा गृह्य नाम कल्पसूत्र हमारे पूर्वज ऋषियों ने बनाते थे। श्रुति में कहे धर्म को खोलने वाले होने से ही उन का नाम श्रौत सूत्र रक्खा गया है। उस श्रुति में कहे धर्म में जो शंका उत्पन्न होती थी वा होती है और होंगी उन का समाधान करने के लिये जैमिनि आचार्य ने पूर्वमीमांसा शास्त्र बनाया है। जैसे घट पटादि पदार्थों के बनने की शक्ति पहिले से ही पृथिवी के भीतर अनादि विद्यमान है वा यों कहें कि घट पटादि सभी पदार्थ अपने २ सूक्ष्म रूप से अपने २ उपादान कारण पृथिव्यादि में पहिले से ही विद्यमान हैं तभी तो पृथिव्यादि से वैसी २ दशा में प्रकट हो २ कर अपने २ कारण में लीन हो जाते हैं। इसी अभिप्राय को लेकर सांख्यशास्त्र का यह सिद्धान्त चला है कि (नासत आत्मलाभः। न सत आत्महानम्) असत् वस्तु के स्वरूप का लाभ और सत् वस्तु के स्वरूप की हानि कदापि नहीं होती। वैसे ही सब श्रौत सूत्रादि ग्रन्थोंका मूल वेद है पृथिवी से घट पटादि के तुल्य सब ग्रन्थ कोई साक्षात् कोई परम्परागत वेद से निकले हैं। इस से श्रौत गृह्य नीमांसा न्याय सांख्यादि सब का मूल वेद है। तथा श्रौत गृह्यनामक कल्पसूत्रों का भी समझना अब कालक्रम से मनुष्यों के अल्पज्ञ होते जाने

से ऋषियों की कठिन प्रतीत हुआ तब अठारह स्मृतियां मानवधर्म शास्त्रादि बनाये कि जिन से उसी प्रेरणारूप वेदोक्त धर्म के सम को ठीक २ समझाया जावे। चाहे यों कहो मानो कि सनातन वैदिक धर्म का अधिक २ धर्म खोलने के लिये ही स्मृतियां और उन पर इतिहासपुराणादि पुस्तक बनते गये हैं। मनुस्मृति आदि में (वैवाहिकोऽग्नौ कुर्वीत गृह्यकर्म यथाविधि) इत्यादि श्लोकों में कहे गृह्यकर्म ये ही हैं कि जो मानवगृह्यसूत्रादि में कहे गये हैं। और यथाविधि कहने से जैसा विधान उन कर्मों का गृह्यसूत्रों में कहा गया है उसी विधि से करे। इस कथन से मनु आदि महर्षियों ने गृह्य और सूत्रों का स्पष्ट संकेत किया है। इस से सिद्ध होता है कि इन गृह्यनामक कल्प-सूत्रों का आशय ले २ कर मनु आदि धर्मशास्त्र बने हैं। अर्थात् किसी स्मृति के बनने में किसी वेदशाखा के किसी गृह्यसूत्र का आशय लिया गया है। तदनुसार अनेक बातों के साफ २ मिलने से जान पड़ता है कि मनुस्मृति के बनने में विशेष कर इस मानवगृह्यसूत्र का आशय लिया है। इसके लिये कई उदाहरण हम नीचे दिखाते हैं ॥

मनुस्मृति में धर्म के व्याख्यान का आरम्भ द्वितीयाध्याय से चला है वहां प्रथम ब्रह्मचर्य धर्म कहा है यहां इस गृह्यसूत्र के आरम्भ में भी प्रथम ब्रह्मचारी के नियम चले हैं। ब्रह्मचारी सब बाल मुड़ावे वा केवल शिखा रक्खे वा सब बाल रखावे (मनु० अ० २ श्लोक २१९। मुण्डोवास्याज्जटिलोवास्या दधवा स्याच्छिखान्तः। मानवगृह्ये पु० १ खं० २ सू० ६ मुण्डः शिखान्तः सर्वजटो वा) प्रातः सायंकाल सूर्य के उदय अस्त पर सोता रहे तो प्रायश्चित्त (मनु० अ० २। श्लो० २२०। मानवगृह्ये पु० १। खं० ३। सू० १) आवण की पौर्णमासी पर उपाकर्म करे (मनु० अ० ४। ८५। मानवगृह्य पु० १ खं० ४ सू० १ से) शुरु की अनुमति आज्ञा लेकर सनावर्त्तन करे (मनु० अ० ३। श्लो० ४। मानवगृह्य पु० १ खं० २ सू० १८) रजस्वला के साथ सोने आदिका निषेध (मनु० अ० ४ श्लो० ४०। मानवगृह्य पु० १। खं० २ सू० १९) ग्राम से बाहर निकल कर एकान्त जङ्गल में सन्ध्या करना (मनु० अ० २। श्लो० १०४। मानवगृह्य पु० १ खं० २ सू० २) ब्रह्मचारी को मधुमांस का तथा स्त्री के स्पर्शादि का निषेध (मनु० अ० २। श्लो० १७७। मानवगृह्य पु० १। खं० १ सू० ११। १२) इत्यादि सैकड़ों अंश जैसे २ इस मानवगृह्यसूत्र में लिखे हैं वैसे

ही ज्यों के त्यों मनुस्मृति में भी मिलते हैं । इस से यह निहृ है कि इसी मानवशृङ्खलसूत्र का विशेष सहारा ले कर मनुस्मृति नामक धर्मशास्त्र बना है । इस पर कोई यह शंका कर सकता है कि मनुस्मृति का सहारा लेकर मानवशृङ्खलसूत्र पीछे बना होऐना भी तो दोनों के अंग मिलने से अभिप्राय निकल सकता है तब यही क्यों मान लिया जाय मनु आदि स्मृति पीछे से बनी हैं । तब इस का समाधान यह है कि मानवशृङ्खलसूत्रकार मन्त्र और ब्राह्मणात्मक वेद को छोड़ कर अन्य किसी ग्रन्थ की अपेक्षा नहीं रखते । इससे यह निश्चय है कि जो वस्तु जिस के पश्चात् वा जिस के विद्यमान होते हुए बनता है वह अपने से पहिले की स्वांश में अवश्य ही अपेक्षा रखता है । परन्तु मनुस्मृति आदि में अनेक स्थलों पर (यथापिचि) पद आता है उससे स्पष्ट सिद्ध है कि वह शृङ्खलसूत्र में लिखे विधान को बीच २ बतलाता है । इस कारण पूर्वोक्त विचार सर्वथा ठीक ही जानना चाहिये सन्देह ठीक २ न सगमने से होते हैं ॥

हमने इस मानवशृङ्खलसूत्र को जैसा पुस्तक निहा विसा ही शोध कर लपाया है । अशुद्धि विशेष न दीख पढ़ने से शुद्धि पत्र इस लेख में नहीं लगाया गया है । यदि कम उठने के कारण कहीं २ छपने का दोष रहजाने से किन्हीं महाशयों को कोई २ अशुद्धि जान पड़े तो स्वयं शोध लें । और इस ग्रन्थ का सूची पत्र साथ में लगा होने से इस ग्रन्थ में कहे सब विषयों का ठीक २ पता लगजायगा । इस ग्रन्थ के अन्त में जिन के यहां पुत्र नहीं होते वा हो कर नहीं रहते उन के पुत्र उत्पन्न होने के लिये बहुत अच्छा पुत्रेष्टि पाग कहा है । परन्तु उस को कोई धर्मार्थवा शूद्रालु शूद्राचारी विद्वान् करावे यदि जी को बन्ध्यादोष न हो तो पुत्रोत्पन्न होने की पूर्ण सम्भावना है । इस ग्रन्थ में मनुष्य की अल्पज्ञता के कारण भाषानुवाद में कहीं कोई बड़ा दोष किहीं महाशय को प्रतीत हो तो वे कृपाकृति से हमें अवश्य सूचित करें

ह० भीमसेनशर्मणः

सम्पादक प्रा० स० स्थ-इटावा-

अथ मानवग्रहपसूत्राणां विषय सूचीपत्रम् ॥

संख्या	विषयः	पृष्ठानि	संख्या	विषयः	पृष्ठानि
१-	ब्रह्मचारि नियमाः	१	३२-	केशान्तसंस्कारः	४३
२-	संनिदाधानम्	२	३३-	उपनयनसंस्कारः	४४-४८
३-	सन्ध्योपसनम्	३	३४-	चातुर्होत्रिकी दीक्षा	४८
४-	नैष्ठिक ब्रह्मचारिणः कृत्यम्	४	३५-	आग्निकी दीक्षा	४९
५-	उनावर्तन संस्कारः	५	३६-	आश्वमेधिकी दीक्षा	५०
६-	स्नातक नियमाः	६	३७-	आवस्यमान्याधानम्	५२
७-	प्रायश्चित्तानि	७	३८-	सामान्य(स्थालीपाकः) प्रकरणम्	४५-५८
८-	उपाकर्म्मविधिः	८	३९-	स्मार्त्तार्त्तमिहोत्रम्	५८
९-	वेदाध्ययनविधिः	९	४०-	पक्षयागः	५९
१०-	वेदानध्यायाः	९	४१-	आश्वयुजीयागः	५९
११-	वेदोत्सर्गविधिः	१०	४२-	नवाक्षेष्टः	५९
१२-	वेदभागविशेषाध्ययनविचारः	११	४३-	पशुयागः	६०
१३-	अन्तरकल्पकर्मविचारः	११	४४-	श्रलगवयज्ञः	६२
१४-	होम विशेष विचारः	१३	४५-	ध्रुवाश्व कल्पयागः	६३
१५-	वेदाध्ययनार्हश्रद्धात्राः	१४	४६-	आग्रहायणीकर्म	६५
१६-	विवाह संस्कारः	१४-३४	४७-	स्तारारोहणावरोहणे	६६
१७-	विवाहार्हकन्याविचारः	१५	४८-	स्मार्त्तचातुर्मास्यानि	६६
१८-	ब्राह्मार्थविवाहौ	१५	४९-	अष्टकात्रयकर्मणि	६७-६९
१९-	वधवागृहप्रवेशविधिः	३४	५०-	फलगुनीयागः	७०
२०-	प्राजापत्यः स्थालीपाकः	३६	५१-	सीताक्षयादीनिकर्माणि	७१
२१-	पिशडपितृयज्ञः	३६	५२-	शालाकर्मविधिः	७१-७३
२२-	दरुपत्योर्ब्रह्मचर्यम्	३६	५३-	मणिकावधानम्	७४
२३-	गर्भाधान विधिः	३६	५४-	वास्तोष्पत्ययागः (वास्तुप्रतिष्ठा)	७४
२४-	सीनव्लोकायनसंस्कारः	३७	५५-	पंचमहायज्ञाः (वैश्वदेवकर्म)	७५
२५-	पुंसवनसंस्कारः	३८	५६-	घनलाभाय षष्ठीकल्पः	७७
२६-	जातकर्म संस्कारः	३८	५७-	विनायक(भूतोत्पात)शान्तिकर्म	७९
२७-	नासकरण संस्कारः	३९	५८-	अद्भुतोत्पातप्रायश्चित्तानि	८३
२८-	प्रवासादागतस्य कृत्यम्	४०	५९-	सर्पबलिर्कर्म	८५
२९-	निष्क्रमण संस्कारः	४०	६०-	कपोतपदप्रायश्चित्तम्	८७
३०-	अक्षप्राशन संस्कारः	४१	६१-	षाडाहुतः पुत्रेष्टियागः	८८
३१-	ब्रूडाकर्मसंस्कारः	४२	६२-	सामान्य परिभाषा	९०

अथ मानवगृह्यसूत्रम्

उपनयनप्रभृति व्रतचारी स्यात् ॥ १ ॥ मार्गवासाः सं-
 हतकेशो भिक्षाचार्यवृत्तिः सशल्कदण्डः सप्तमुञ्जां मेखलां
 धारयेदाचार्यस्याप्रतिकूलः सर्वकारी ॥ २ ॥ यदेनमुपैयात्त-
 दस्मै दद्याद् बहूनां येन संयुक्तः ॥ ३ ॥ नास्थशय्यामाविशेत् ४
 न संवस्त्रयेत् ॥ ५ ॥ न रयमारोहेत् ॥ ६ ॥ नानृतं वदेत्
 ॥ ७ ॥ न मुषितां स्त्रियं प्रेक्षेत् ॥ ८ ॥ न विहारार्थं जल्पेत् ॥ ९ ॥

भाषार्थ—यज्ञोपवीतसंस्कार होने से लेकर आगे कहे नियमों का पालन
 करने वाला ब्रह्मचारी हो ॥ १ ॥ मृगचर्म का बस्त्र छुपट्टे के स्थान में ओढ़ने वाला
 हो सब वाला कच्चे वा सब कटावे अथवा केवल छोटी रस्से भिक्षा मांगकर वा
 आचार्य से भोजनरूप जीविका करे वह्नुनसहित ढांक वा वेल का दण्ड धारण
 करे सात मूजों (कीयों) की मेखला कटिभाग में धारण करे । आचार्य—गुरु
 के समक्ष झूठ वा लज्ज कपटादि कुछ न करे आज्ञाकारी रहे और गुरुसेवायें
 गुरु को स्नानादि कराना आदि सब काम करे ॥ २ ॥ जो कुछ धनादि वस्तु
 ब्रह्मचारी को मिले वह सब गुरु को समर्पण करे यदि कई गुरु हों तो जिस के
 समीप विशेष रहना हो उस को धनादि देवे ॥ ३ ॥ गुरु की शय्या वा
 आसन पर पीछे भी न बैठे न लेटे ॥ ४ ॥ सूत आदि के अच्छे २ बस्त्र गुरु के
 तुल्य न धारण करे वा स्त्री आदि के वस्त्रों से अपने वस्त्रों वा शरीर का स्पर्श
 न होने देवे ॥ ५ ॥ रथ घोड़ा हाथी आदि पर न चढ़े ॥ ६ ॥ सिध्या भाष-
 ण कठोर भाषण और किसी की निन्दा वा जुगली न करे व्यर्थ न बोले ॥ ७ ॥
 किसी नङ्गी स्त्री को न देखे न स्पर्श करे स्त्री का स्मरण भी न करे ॥ ८ ॥
 काम भोग सम्बन्धी स्त्रियों का कथन वा धन सुवर्णादि का कथन न करे न
 सुने अर्थात् कामैषणा तथा वित्तैषणा से सर्वथा अपने को बचाता रहे ॥ ९ ॥

नरुच्यर्थकिंचनधारयेत् ॥ १० ॥ सर्वाणिसांस्पर्शिकानि
 स्त्रीभ्योवर्जयेत् ॥ ११ ॥ नमधुमांसेप्राशनीयात्क्षारलवण
 च ॥ १२ ॥ न स्नायादुदकंवाऽभ्यवेयान् ॥ १३ ॥ यदिस्ना-
 याद्दण्डइवाप्सुप्लवते ॥ १४ ॥ प्रागस्तमयान्निष्क्रम्यसमिधा-
 वाहरेत् । हरिण्यौब्रह्मवर्चसकामइतिश्रुतिः ॥ १५ ॥ इमंस्तो-
 ममहंतइत्यग्निंपरिसमुष्मपर्युक्ष्यपरिस्तीर्य-एधोऽस्येधिषीम-
 हीतिसमिधमादधाति, समिदसिसमेधिषीमहीतिद्वितीयाम् ॥ १६ ॥
 अपो अद्यान्वचारिषमित्युपतिष्ठते ॥ १७ ॥ यदग्ने तपसा
 तपो ब्रह्मचर्यमुपेमसि । प्रियाः श्रुतरय भूयास्मायुष्मन्तः
 सुमेधसः ॥ इति मुखं विमृष्टे ॥ १८ ॥

भाषार्थः—चित्त को प्रसन्न करने के लिये वा अपनी शोभा बढ़ाने के लिये
 इतर चन्दन पुष्पमालादि कुछ धारण न करे ॥ १० ॥ स्त्री का वर्णन काव्य सु-
 नना स्त्री के स्तनादि अङ्गों का देखना छूना खुशलाना उबटन करना आदि
 तथा गाना बजाना नाचनादि सब काम सर्वथा छोड़ देवे ॥ ११ ॥ शहद मांस
 खार और लवण न खावे, परन्तु यवाखार और दूधे लवण का निषेध नहीं
 है ॥ १२ ॥ नित्य कामना से स्नान न करे जलाशय में घुसकर स्नान न करे ।
 किन्तु जलाशय के समीप आचमनादि के लिये जाया करे ॥ १३ ॥ यदि स्नान
 भी करे तो शरीर को मल २ कर न धोवे तथा उबटन न करे किन्तु लफड़ी के
 तुल्य जल पर सतराता रहे ॥ १४ ॥ सूर्यास्त होने से पहिले अपने आश्रम से
 बाहर निकल के दूर से स्वयं सूखी हुई समिधा लावे तो श्रुति में लिखा है कि
 ब्रह्मतेज बढ़ता है ॥ १५ ॥ (इमंस्तोममहंत०) इस मन्त्र से अग्नि के समीप
 हाथ से वा कंचीसे संमार्जित कर अग्नि के सब ओर प्रदक्षिण जल सेचन करके
 सब ओर कुछ दिखा के (एधोऽस्येधि०) मन्त्र से एक समिधा अग्नि में चढ़ावे
 और (समिदसि०) मन्त्र से दूसरी समिधा चढ़ावे ॥ १६ ॥ (अपोअद्यान्व०)
 मन्त्र से अग्नि का उपस्थान करे ॥ १७ ॥ (यदग्नेतपसा०) मन्त्र पढ़ के दहिने
 हाथ में जल लेके मुख का स्पर्श करे ॥ १८ ॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाइति श्रोत्रे अभिमृशति ॥ १९ ॥
 भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राइति चक्षुषी ॥ २० ॥ स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितमित्यङ्गानि ॥ २१ ॥ इह धृतिरिह स्व-
 धृतिरिति हृदयदेशमारभ्य जपति ॥ २२ ॥ रुचं नो धेहीति
 पृथिवीमारभते ॥ २३ ॥ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्या-
 युषमगस्त्यस्य त्र्यायुषम् । यद्वेवानां त्र्यायुषं तन्मे अस्तु
 त्र्यायुषम् । इति भस्मनाङ्गानि संस्पृश्यापोहिष्ठीयाभिर्मा-
 र्जयते ॥ २४ ॥ इति प्रथमः खण्डः समाप्तः ॥

अथ सन्ध्यामुपास्ते ॥ १ ॥ प्रागस्तमयान्तिष्क्रम्योत्तर-
 तो ग्रामस्य पुरस्ताद्वा शुचौ देशे निषद्योपस्पृश्यापामञ्ज-
 लं पूरयित्वा प्रदक्षिणमावृत्य-आयाहि विरजं देव्यक्षरे

(भद्रं कर्णेभिः ०) मन्त्र से दोनों कानों का स्पर्श करे प्रथम दहिने फिर बायें
 का ॥ १९ ॥ (भद्रं पश्येमाक्ष ०) मन्त्र से दोनों आँखों का एक साथ ॥ २० ॥
 (स्थिरैरङ्गैः ०) मन्त्र से शिर, आदि सब अङ्गों का स्पर्श करे ॥ २१ ॥ (इह-
 धृतिः ०) मन्त्र का हृदय को स्पर्श करता हुआ जप करे ॥ २२ ॥ (रुचं नो धेहि ०)
 मन्त्र की पृथिवी का स्पर्श करता हुआ जपे ॥ २३ ॥ (त्र्यायुषं जमदग्नेः ०) म-
 न्त्र की पढ़ता हुआ शिर आदि सब अङ्गों में बहार्ह हृद् संनिधियों की भस्म
 लगावे फिर (आपोहिष्ठा ०) आदि तीन मन्त्रों से तीन बार मार्जन करे
 ॥ २४ ॥ प्रातःकाल सन्ध्योपासन के पश्चात् समिदाधान करे । सन्ध्या करने
 की सायंकाल निकले तभी समिधा लाया करे सन्ध्या आश्रम से बाहर और
 समिदाधान आश्रम में किया करे ॥

भाषार्थः—अब सन्ध्योपासन कर्म का विचार लिखते हैं । सायंकाल
 बैठकर सन्ध्या करे ॥ १ ॥ सूर्यास्त होने से पहिले गुरु के आश्रम वा ग्राम से
 निकलकर उत्तर वा पूर्व दिशा में जाकर शुद्ध स्थान में बैठ कर हाथ पाँव धो

ब्रह्मसंमिते । गायत्री ! छन्दसां मातरिदं ब्रह्म जुषस्व मे ॥
 इत्यावाहयति ॥२॥ ओजोऽसीति जपित्वा, कस्ते युनक्तीति
 योजयित्वा, ओं भूर्भुवः स्वस्तस्वितुरित्यष्टौ कृत्वः प्रयुङ्क्त
 इत्याम्नाताः कामाः । आदेवोयातीति त्रिष्टुभं राजन्यस्या
 युज्जतइति जगती वैश्यस्य ॥ ३ ॥ उदुत्यं जातवेदसमिति
 द्वे निगद्य कस्ते विमुञ्चतीति विमुच्योदकाञ्जलिमुत्सृजति
 ॥४॥ एवं प्रातस्तिष्ठन् ॥५॥ एतेन धर्मेण द्वादशचतुर्विंशतिषट्
 त्रिंशतमष्टाचत्वारिंशतं यावर्षाणि यो ब्राह्मणो राजन्यो वैश्यो
 वा ब्रह्मचर्यं चरति मुण्डः शिखाजटः सर्वजटो वा मल्लूर-

के अञ्जुली में जल भर कर प्रदक्षिणावृत्ति करके (आया हि विरजे०) मन्त्र
 पढ़ के गायत्री का आवाहन करे ॥ २ ॥ फिर (ओजोऽसि०) मन्त्र पढ़ के
 गायत्री देवी की स्तुति करके (कस्तेयुनक्ति०) मन्त्र पढ़ के अपने माय गा-
 यत्री देवी को युक्त कर (ओं भूर्भुवः०) मन्त्र को प्रणव सहित ब्राह्मण ब्रह्म-
 चारी आठवार नित्य २ पढ़ा करे तो ब्रह्मचारी की सब कामना पूर्ण हो
 जाती है (आदेवोयाति०) इस त्रिष्टुप् छन्द वाले मन्त्र का उपदेश उपनयन
 समय क्षत्रिय ब्रह्मचारी को होना चाहिये तथा (युज्जते०) इस जगती मन्त्र का
 उपदेश वैश्य ब्रह्मचारी को करना चाहिये और वे दोनों हूँ अपने २ मन्त्रों
 का आठ २ बार नित्य २ प्रणवव्यवृत्ति सहित जप किया करें । यह व्यवस्था
 श्रुत्यनुकूल ही जानो ॥३॥ (उदुत्यं जातवेद०) इत्यादि दो मन्त्रों को उच्चस्वर से पढ़के
 (कस्ते विमुञ्चति०) मन्त्र द्वारा गायत्री का विमोचन करके पहिले भरी जलाञ्ज-
 लि को भूमि पर छोड़ देवे । अर्थात् अञ्जुली में जल भर के आठवार प्रणवादि
 सहित गायत्री का जप धीरे २ करने बाद यह कृत्य ब्राह्मण करे और अपने २
 मन्त्रों से ऐसा ही क्षत्रियादि करें ॥ ४ ॥ इसी उक्त प्रकार से प्रातःकाल खड़े
 होके सन्ध्या करे ॥५॥ इस उक्त प्रकार ठीकर नित्य २ नियम धर्म का पालन करता
 हुआ १२ । २४ । ३६ । वा ४८ वर्ष तक मुण्ड जटिल वा शिखा मात्र रखने वा-
 ला ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य ब्रह्मचर्य ब्रत धारण करता है और मलिन-शरीर

बलः कृशः स्नात्वा स सर्वं विन्दते यत्किञ्चि मनसेच्छतीति ॥ ६ ॥
 एतेन धर्मेण साध्वधीते ॥ ७ ॥ छन्दस्यर्थान् बुद्ध्वा स्ना-
 स्यन् गां कारयेत् ॥ ८ ॥ आचार्यमर्हयच्छ्रोत्रियः ॥ ९ ॥ अन्यो वे-
 दपाठी न तस्य स्नानम् ॥ १० ॥ आपोहिष्ठेति तिसृभिर्हिरण्य-
 वर्णाः शुचय इति द्वाभ्यां स्नात्वाऽहते वाससी परिधत्ते ॥ ११ ॥
 वस्यसि वसुमन्तं मा कुरु सौवचसाय मा तेजसे ब्रह्मवर्च-
 साय परिदधामीति परिदधाति ॥ १२ ॥ यथा द्यौश्च पृथिवी
 च न विभीतो न रिप्यतः । एवं मे प्राण मा बिभ एष मे
 प्राण मा रिषः ॥ इत्याहुक्ते ॥ १३ ॥ हिरण्यमावध्नीते ॥ १४ ॥
 क्खत्रं धारयते दण्डं मालां गन्धम् ॥ १५ ॥ प्रतिष्ठे स्थो दैवते
 द्यावापृथिवी मा मा संताममित्युपानहौ ॥ १६ ॥ द्विवस्त्रोऽत

निर्घन पतना कृम पुत्रा समावर्त्तन स्नान करता है वह जो २ मन से चाह
 ता है उन मन्त्र को प्राप्त कर लेता है ॥ ६ ॥ इन उक्त नियम से जो कुछ पढ़
 ता है वह पढ़ना ठीक सुफल होता है ॥ ७ ॥ व्याकरण मीमांसादि पढ़ने द्वा-
 रा वेदार्थ जान कर समावर्त्तन करता हुआ मधुपर्कादि से दूध पाने ॥ ८ ॥
 श्रोत्रिय हुआ वेद वेदाङ्ग पढ़के ब्रह्मचारी आचार्य का पूजन करे ॥ ९ ॥
 ब्रह्मचारी दो प्रकार के होते हैं एक नैष्ठिक द्वितीय वेद समाप्ति पर समाव-
 र्त्तन करने वाला इन में नैष्ठिक वेदपाठी समावर्त्तन स्नान न करे ॥ १० ॥
 (आपोहिष्ठा०) इत्यादि तीन मन्त्रों से तथा (हिरण्यवर्णा०) इ-
 त्यादि दो मन्त्रों से सुगन्धिसिञ्चित जलद्वारा स्नान करके जो किसी धान में
 से फाड़े न हों ऐसे चरिदार नये दो वस्त्रों को एक धोती एक ऊपर धारण
 करे ॥ ११ ॥ अर्थात् (वस्यसि०) मन्त्र पढ़ के वस्त्र धारण करे ॥ १२ ॥ फिर
 (यथा द्यौश्च०) मन्त्र से प्रथम दहिनी फिर बायीं आंख में अञ्जन लगावे ॥ १३ ॥
 फिर बिना ही मन्त्र पढ़े वानों में सुवर्ण के कुण्डल और सुवर्ण के कड़ा आ-
 दि आभूषण धारण करे ॥ १४ ॥ फिर काता वांस की छड़ी पुष्पमाला चन्दन
 केशरादि सुगन्ध इन सब को धारण करे ॥ १५ ॥ फिर (प्रतिष्ठे स्थो०) मन्त्र
 से प्रथम दहिनी पग में फिर चामपंग में नयेजुते पहिने ॥ १६ ॥ इस से आगे सदा

ऊर्ध्वं भवति तस्माच्छोभनं वासो भक्तं व्यमिति श्रुतिः ॥१७॥

आमन्त्र्य गुरुन् गुरुवधून् च स्वान् गृहान् व्रजेत् ॥ १८ ॥
प्रतिपिदुमपरया द्वारानिष्क्रमणं मलवद्वासत्ता सह संवस्त्रणं
रजःसुवासिन्या सह शय्या गुरोर्दुःस्त्वयचनमस्याने शयनं
स्मयनं सरणं स्थानं यानं गानं तस्य चक्षणम् ॥ १९ ॥ पी-
णं मास्याममावास्यायां वाऽऽग्नेयेन पशुना यजेत् ॥ २० ॥
तस्य हविर्भक्षयित्वा यथासुखमतऊर्ध्वं मधुमांसे प्राश्नी-
यात् क्षारलवणे च ॥ २१ ॥ इति द्वितीयः खण्डः ॥

यमेवं विद्वांसमभ्युदियाद्वाभ्यस्तमियाद्वा प्रतिबुध्य जपेत्-

दो वस्त्र धारण करने वाला स्नातक हो क्योंकि श्रुति में लिखा है कि स्नातक
गृहस्थ गृह गौमित्र निमंत्रण वस्त्र धारण करे । अर्थात् वनवाचन में प्रथम से र-
खे हुए नव वाह गिला ढेकके पहिले मुड़ाये पीछे पूर्वोक्त स्नानादि करे ॥१७॥
यदि पिता से भिन्न गुरु के पास वेदाध्ययनार्थ गया हो तो गुरु
और गुरुपत्नी से आज्ञा लेकर अपने पित्रघर की जावे ॥ १८ ॥ अब स्नानक
गृहस्थ के लिये कुछ नियम कहते हैं । घर के मुख्य द्वार की दीड़ के किसी
खिड़की आदि से न निकला करे । मलिन कपड़े धालों का दर्शन न करे ।
रजस्वला पत्नी के साथ न सोवे । माता पितादि गुरु लोगों के विषय में समस्त
का परीक्ष में कटुवाक्य न कहे न सुने । शयन स्थान से अल्पत्र न सोवे बिना
प्रयोजन न हुंसे अर्थ न डाले निष्प्रयोजन कहीं न टहुरे गाना बजाना नाचना
न करे और न अन्यो के गानादि को सुनने देखने को जावे ॥ १९ ॥ समावर्तन
संस्कार के पश्चात् जो पीर्यमानी वा अमावास्या पड़े उसी दिन अग्नि देवता
वाला पशुयाग करे ॥ २० ॥ उस में यज्ञऋषि हविष् भक्षण करके आगे शहड
सौनखार और लवण चाहे तो खावे । सांभ भक्षण का यहां विधान नहीं किन्तु
इससे पूर्व कदापि न खावे यह दिखाना है । सांभभक्षण राग प्राप्त होने से उसका
विधान हो नहीं सकता प्राप्ति में निषेध और अप्राप्ति में विधि होता है ॥ २१ ॥
यह हमरा खण्ड समाप्त होगया ॥

साधारण-निमित्त उक्त प्रकार ब्रह्मचर्यव्रतके साथ गुरु गुरु ने वेदाध्ययन करके

पुनर्मामैत्विन्द्रियं पुनरायुः पुनर्भगः । पुनर्द्रविणमैतुमाम् । पुन-
 ब्राह्मणमैतुमाम् । अथो यथेमे धिष्ण्यासो अग्नयो यथास्थानं
 कल्पयन्तामिहैव । इत्यभ्युदितः ॥ १ ॥ पुनर्म आत्मा पुनरायुरैतु
 पुनः प्राणः पुनराकूतिरैतु । वैश्वानरो वावृधानो वरेणा-
 न्तास्तिष्ठतो मे मनो अमृतस्य केतुः ॥ इत्यभ्यस्तमितः ॥ २ ॥
 उभावेववाभ्युदितो जपेदुभावेव वाभ्यस्तमितः ॥ ३ ॥ यद्य-
 चरणीयान्वा चरेदनाक्रोश्यान्वा क्रोशेदभोज्यस्य वाऽन्नम-
 शनीयादक्षि वा स्पन्देत्कर्णो वा क्रोशदग्निं वा चित्यमा-
 रोहेत्-शमशानं वा गच्छेद्यूपं वोपस्पशेद् रेतसो वा स्कन्दे-
 देताभ्यामेव मन्त्राभ्यामाहुती जुहुयादपि वाज्यलिप्ते स-
 मिधावादध्यादपिवा मन्त्रावेव जपेत् ॥ ४ ॥ एवमधममा-
 चर्याऽस्थूलम् ॥ ५ ॥ स्थूले वेषण्या विहरेदवस्त्रो लोमत्व-

समावर्तन किया हो वह स्नातक गृहस्थ प्रातःकाल सोता रहे वा अन्य काम
 में लगा रहे और सूर्योदय होजावे वा सायंकाल में सूर्य अस्त होजावे और
 सन्ध्योपासन न कर पावे तो जागकर वा सचेत होकर प्रातःसन्ध्या के व्यति-
 क्रम में (पुनर्मामैत्वि०) इत्यादि दो मन्त्रों का जप करे ॥ १ ॥ तथा सायंकाल
 की सन्ध्या छूटने पर (पुनर्म आत्मा०) इत्यादि जपे ॥ २ ॥ अथवा दोनों प्र-
 कार के उक्त मन्त्रों का दोनों के प्रायश्चित्त में जप करे ॥ ३ ॥ यदि खिड़की से
 निकलनादि दिरुह आचरण करे यदि स्त्री पुत्रादि की धनकावे कोशे यदि सूद
 खोर व्याज लेने वाले आदि का अन्न खावे यदि आख फटके वा कान में शब्द
 हो यदि यज्ञके अग्नि पर खड़ा हो यदि सुर्दाके साथ वंशशान भूमिमें जावे वा
 यज्ञके यूपस्तम्भ का स्पर्श करे वा स्वप्न में घोरैरुल्लसित हो तो इहाँ पूर्वोक्त दो
 मन्त्रों से प्रायश्चित्तार्थ दो आहुती होम करे अथवा घी में हुब्रीके दो समिधा
 अग्निमें चढ़ावे वा (पुनर्मामैत्वि०) इत्यादि दोमन्त्रों का जपही इन अपराधोंमें भी
 प्रायश्चित्त करे ॥ ४ ॥ इसी प्रकार उपपातकादि छोटा वा बड़ा अधर्म करके भी
 उक्त मन्त्रों से आहुति दे समिधा चढ़ावे वा जप करे ॥ ५ ॥ और यदि चार म-

गाच्छादोऽग्निमारोहेत्संग्रामे वा घातयेदपि वाऽग्निमिन्धा-
नं तपसाऽऽ मानमुपयोजयीत ॥ ६ ॥ इति तृतीयः खण्डः ॥

वर्षासु श्रवणेन स्वाध्यायानुपाकुरुते ॥ १ ॥ स जुहो-
ति । अप्वानामासि तस्यास्ते जोष्टीं गमेयम् । अहमिद्वि पि-
तुःपरि मेधामृतस्य जग्रभ । अहं सूर्यइवाजनि स्वाहा ॥ अ-
प्वो नामासि तस्यते जोष्टं गमेयम् । अहमिद्वि पितुःप-
रि मेधामृतस्य जग्रभ । अहं सूर्यइवाजनि स्वाहा ॥ सरस्व-
ती नामासि सरस्वानामासि युक्तिर्नामासि योगो नामासि
मतिर्नामासि मनोनामासि तस्यास्ते जोष्टीं गमेयम् । तस्य
ते जोष्टं गमेयमिति सर्वत्रोऽनुपजति ॥ २ ॥ युजे स्वाहा

हापातकों में से कोई पाप किया ही तो उस पाप के चिह्न सहित भूतएकल
पर तीर्थादि में अमण करे । जैसे ब्रह्महत्या की ही तो बिना शिर के लख
पुरुष का चिह्न हो (गुरुतरे भगः कार्यः) गुरुपत्नी गमन में भग का चिह्न
रहे । अथवा सूतशस्त्र से रहित रीनों सहित घर्म ओढ़ के सम्यक् प्रवृत्तित
अग्नि में गिरके जल जावे (प्रायेदात्मानमग्नौ वा समिद्धे त्रिरवाक् शिराः । इ-
ति मनुः ।) अथवा युद्ध में किसी के शस्त्र से मर जावे (मनु-लक्ष्यं शस्त्रभृ-
तां वा स्यात्) अथवा अग्नि में समिदाधानादि नियम से करता हुआ प्रा-
णायामादि तप करने में लग जावे ॥ ६ ॥ यह तीसरा खण्ड पूरा हुआ ॥

वर्षा ऋतु में अग्रण नक्षत्र के दिन स्वाध्यायोपाकरण नामक कर्म करे । १ ।
सह वेदाध्ययन या ब्रह्मयज्ञ का आरम्भ करने वाला (अप्वानामासि०) इ-
त्यादि आठ आहुति होम आचार और आज्यभागहुतियों के पश्चात् करे ।
तथा (सरस्वतीनामा०) इत्यादि छः खण्डों में जो २ खीलिङ्ग हैं उनके सा-
थ (तस्यास्ते०) इत्यादि जोहें । और (सरस्वानामा०) आदि पुनपुंसक
लिंगों में (तस्यतेऽग्नौ०) इत्यादि जोड़ना तथा सब के अन्त में स्वाहा लगा-
ना चाहिये ॥ २ ॥ तदनन्तर विद्यार्थियों वा अन्य सहाध्यायी वेदपाठियों

प्रयुजे रवाहोद्युजे स्वाहेत्येतैरन्तेवासिनां योगमिच्छन्निति ॥३॥
 प्राक्स्विष्टकृतोऽथजपति ॥ ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदि-
 ष्यामि तनमामवतु तद्वक्तारमवत्ववतु मामवतुवक्तारम् । वा-
 ङ्मे मनसि प्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरा-
 युर्मयि धेहि वेदस्य वाणीः स्थ । ओंभूर्भुवः स्वस्तत्सवितुरि-
 ति ॥ ४ ॥ दर्भपाणिस्त्रिः सावित्रीमधीते । त्रींश्चादितोऽनुवा-
 कान् । को वो युनक्तीति च । उपाकुर्महेऽध्यायानुपतिष्ठन्तु
 छन्दांसोति च ॥ ५ ॥ तस्यानध्यायाः समूहन्वातो वलीक-
 क्षारप्रभृति वर्षं न विद्योतमाने न स्तनयतीति श्रुतिराका-
 लिकं देवनुमुलं विद्युद्वन्वोल्काऽत्यक्षराः शब्दाः । आचारे-
 णान्ये ॥ ६ ॥ अर्द्धपञ्चमास्त्रानधीत्योत्सृजति पञ्चार्द्धपञ्चा-

को चाहता हुआ स्नातक (युजेस्वाहा) इत्यादि तीन मन्त्रों से होम करे ॥३॥
 इस के अनन्तर स्विष्टकृत आहुति से पहिले (ऋतंवदिष्यामि) इत्यादि म-
 न्त्र का जप करे फिर स्विष्टकृत होम करे ॥ ४ ॥ फिर दहिने हाथ में कुश ले-
 कर तीन बार गायत्री सावित्री मन्त्र पढ़े फिर (इषेत्वा) इत्यादि तीन
 अनुवाक पढ़े । तदनन्तर (कोवोयु) इत्यादि पढ़े ॥ ५ ॥ उपाकर्म के बाद
 तीन वा पांच दिन, आंधी आने पर वलीक नाम छज्जा से वर्षने पर अर्थात्
 इतनी वर्षा कम से कम हो जिस से छज्जा के छोर वा औलाती टपकने लगे तब
 भी अनध्याय करे पर इस से कम वर्षने पर नहीं । तथा धिजुली चमकने और
 बादल गर्जने पर भी जब तक चमके वा गर्जे तब तक वेद न पढ़े । ज्योतिः
 शास्त्र में लिखे अनुसार ग्रहों का जब युद्ध हो तब एक दिन रात वेद न पढ़े।
 धिजुली इन्द्र धनुष् और बड़ेर उल्का तारे टूटने पर तथा शृगालादि के कुसम-
 य होने पर भी और सामवेद की ध्वनि होने पर अन्यवेद न पढ़े । इनसे भिन्न
 अनध्याय मनु आदि धर्म शास्त्र में कहे अनुसार जानो ॥६॥ साढ़े चार वा सा-

न्या॥७॥अथ जपति ऋतमवादिषं सत्यमवादिषंतन्मावीत्तद्व-
क्तारमावीदावीन्मामावीद्वक्तारम् । वाङ्मे मनसि प्रतिष्ठिता-
मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरायुर्मयि धेहि । वेदस्य वाणोः
स्थ । ओंभूर्भुवः स्वस्तत्सवितुरिति ॥८॥ दर्भपाणिच्छिः सावित्री-
मधीते । त्रींश्चादितोऽनुवाकान् । को वो विमुञ्चतीति विमुच्यो
त्सृजामहेऽध्यायान्प्रतिश्रवसन्तु छन्दांसीति च ॥ ९ ॥ प्रतिपदं
पक्षिणीं रात्रीं नाधीयत । नातजध्वंमग्नेषु ॥१०॥ आकालिको
विद्युत्स्तनयित्तुवर्षेषु ॥११॥ गोनामेपु मन्त्रब्राह्मणकल्पपि
तृमेधमहाव्रताष्टापदीवैपुवतानि दिवाऽधीयत वैपुवत
माद्रपाणिः ॥ १२ ॥ रुद्रान्न नक्तं न भुक्त्वा न ग्रामे ॥१३॥
शुक्रियस्य प्रवर्ग्यकल्पे नियमो व्याख्यातः । त्रयोविंशन्तु सं

हे पांच सहिने तक नियम से वेदाध्ययन करके वेदाध्यायोत्सर्ग करने करे ॥ ७ ॥
फिर उस में (ऋतमवादिषं) इत्यादि का जप करे ॥ ८ ॥ फिर दहिने
हाथ में कुंथ लेकर तीन बार गायत्री सावित्री को जपे और (वृषे त्वा०)
इत्यादि तीन अनुवाक पढ़े फिर (कोवोविमुञ्चति०) इत्यादि पढ़े ॥ ९ ॥
प्रतिपदा को एक दिन दो रात वेद न पढ़े । इस के पश्चात् भी वादल होने पर
भी न पढ़े ॥ १० ॥ विजुली चमकने वादल गर्जने और वर्षा होने पर आगे भी
एक दिन रात वेद का अध्ययन करे ॥ ११ ॥ गौओं के नाम वाले मन्त्र
ब्राह्मण और कल्पसूत्रों को दिन में पढ़े । पितृमेध कर्मा सम्बन्धी मन्त्र
ब्राह्मण और कल्प सूत्र तथा महाव्रत सम्बन्धी कल्प सूत्र अष्टापदी ब्राह्मण
और विपुवान् नामक यज्ञ के प्रतिपादक वैपुवत मन्त्र ब्राह्मणों को दिन में
पढ़े पर जल में हाथ भिगोकर वैपुवत को पढ़े ॥ १२ ॥ रुद्र देवता के प्रति-
पादक मन्त्र ब्राह्मण और कल्पों को रात में भोजन के पश्चात् और ग्राम में न
पढ़े ॥ १३ ॥ शुक्रिय नामक पचीश अनुवाकों को भी रात में भोजन के प-
श्चात् और ग्राम के भीतर न पढ़े । और इन शुक्रिय मन्त्र ब्राह्मण कल्पों के

मीत्य ॥ १४ ॥ गवां तु नसकाशे गोनामानि गर्भिणीना-
मसकाशेऽष्टापदौ । रेतोमूत्रमिति च ॥ १५ ॥ शुनासीर्यस्य
च सौर्ये चक्षुष्कामस्य । चक्षुर्नाधेहिचक्षुषइति । सूर्योऽपोऽ
वगाहतइति च । आदित्यसौर्ययाम्यानि षड्भूतवानि दिवा-
ऽधीयीत ॥ १६ ॥ उपाकृत्योत्सृज्य च त्र्यहं पञ्चरात्रमेके
॥ १७ ॥ वेदारम्भणे समाप्नौ चाकालम् ॥ १८ ॥ खण्डः समाप्तः
अथातोऽन्तरकल्पं व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥ दर्भमयं वा-

अध्ययन की दिशा कालादि विशेष नियम मानव कल्प सूत्र के प्रवर्ग्य प्रकरण
में कहे जानी । इन शुक्रिय के २५ अनुवाकों में तेईश्वर अनुवाक को आखें
भीच कर पढ़ना चाहिये ॥ १४ ॥ गौश्रों के नामों वाले मन्त्र ब्राह्मण कल्पोंकी
गौश्रों के समीप न पढ़े । परन्तु अष्टापदी संज्ञक ब्राह्मण को गर्भिणी गौश्रोंसे
पृथक् पढ़े । तथा (रेतो मूत्रम्) इत्यादि अपवित्र नामों वाले मन्त्र ब्राह्मण
और कल्पों को उन २ अपवित्र पदार्थों के समीप न पढ़े ॥ १५ ॥ शुना सी-
रीय पर्व की सूर्य देवता वाली (चतुर्नाः) । सूर्योऽपो इन दो ऋचाओं की
चक्षुश्रों का सुख चाहने वाला तथा शुनानीरीय पर्वकी आदित्य सूर्य
और यम देवता वाली दो २ क्र (कः) ऋचाओं की चक्षु सुख न चाहता
हुआ भी दिन में पढ़े ॥ १६ ॥ वेदोपाकर्म और वेदोत्सर्ग कर्म करने पश्चात्
तीन दिन अनध्याय रखे किहीं आचार्यों का मत है कि पांच दिन अनध्याय
करे ॥ १७ ॥ वेद का आरम्भ करने और वेदकी समाप्ति करने पश्चात् जिस समय
आरम्भ समाप्ति किये हों उसी समय तक अनध्याय रखे उस के बीच में फिर
द्वितीय बार आरम्भ समाप्ति न करे ॥ १८ ॥ यह चौथा खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब यहां से आगे इस पांचवें खण्ड में अन्तरकल्प नामक कर्म का व्या-
ख्यान करेंगे । यह कर्म उपाकर्म के बाद होता है उससे पहिले नहीं होता ।
इस कर्म की प्रवृत्ति स्वाध्याय नामक ब्रह्मयज्ञ के अन्तर्गत है इस लिये इसका
नाम अन्तरकल्प है ॥ १ ॥ दर्भ कूट कर बनाये वस्त्र को पहन कर आच-
मन करके नदी आदि जलाशय के घाट पर (अपांनज्ये) इस सैत्रायणी शा-

सः परिधायाचम्यापांनप्त्रइति तीरे जपित्वाऽपोऽवगाह्य
 ओंभुर्भुवःस्वस्तत्सवितुरिति ॥२॥ दर्भपाणिस्त्रिः सावित्री-
 मधीते त्रींश्चादितोऽनुवाकान् ॥ ३ ॥ आपो देवीः । हविष्म-
 तीरिमाः । निग्राभ्याः स्थ । महित्रीणामवोऽस्तु । अग्नेरायुरसि ।
 देवीरापोऽअपांनपात् । देवीरापोमधुमतीः । अग्नयेस्वाहा । रा-
 त्रींरात्रीमित्यष्टौ ॥ ४ ॥ या ओषधयः । समन्यायन्ति । पु-
 नन्तु मा पितरः । अग्नेर्मन्वे । सशेवृधमधिधाः । कयानश्चित्र-
 आभुवदिति तिस्रः ॥ ५ ॥ तच्छंयोरावृणीमहइति माजंयित्वा
 वासांस्युत्सृज्याचार्यान् पितृधर्मेण तर्पयन्ति ॥ ६ ॥ आ-
 दृकल्पेन शेषो व्याख्यातः ॥ ७ ॥ इति ५ खण्डः ॥

अथातोऽग्निं प्रवर्त्तयन्ति ॥ १ ॥ उत्तरतो ग्रामस्य पु-

खा अ० २७ अनु० ८ का वप करके जल में डुबकी लगावे फिर (ओंभुर्भुवःस्व-
 स्तत्स०) इत्यादि गायत्री को दहिने हाथ में कुश लेकर तीन बार पढ़े ॥ २ ॥
 और वेद के आदि से (इपेत्वा०) इत्यादि तीन अनुवाक पढ़े ॥ ३ ॥ फिर
 (आपो देवीः) इत्यादि प्रतीकों वाले आठ अनुवाक पढ़े ॥ ४ ॥ फिर (या-
 ओषधयः०) इत्यादि चार अनुवाकों को और (सशेवृधम्०) इत्यादि तीन ऋ-
 चाओं को पढ़े ॥ ५ ॥ फिर (तच्छंयोरा०) इत्यादि पांच ऋचाओं से सार्जन
 करके कुश के वस्त्र छोड़ कर कल्पसूत्रकार तथा अपने उपनयनादि कराने वा-
 लों में जो २ आचार्य सरगये हों उन सब का अपसव्यादि पितृधर्म से सब का
 त्र लोग तर्पण करें ॥ ६ ॥ आचार्यों के तर्पण के पश्चात् होने वाला शेषकाम इ-
 सी ग्रन्थ में कहे आदृ कल्प अर्थात् पुरुष २ खं० ८ सू० १० से १४ तक कहे अ-
 नुसार जानो ॥ ७ ॥ यह पांचवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब इस ठठे खण्ड में अन्तरकल्प का अङ्ग भूत स्नातकों तथा ब्रह्मचारि-
 यों के लिये अग्नि होम कहते हैं ॥ १ ॥ ग्राम से पूर्व वा उत्तर शुद्ध स्थान में
 श्रौत वेदी के आकार में कुछ जगह बनावे । उस वेदी के आहवनीय स्थान
 पूर्वान्त में चौकोण स्थण्डिल बनाके उस पर विष्टर रूप वा सुट्टी २ भर दाम

रस्ताद्वा शुचौ देशे वेद्याकृतिं कृत्वाऽऽहवनीयस्थाने सप्त-
 न्दांसि प्रतिष्ठाप्य विष्टरान् दर्भमुष्टीन्वा दक्षिणाग्निस्था-
 ने प्रौगाकृतिं कौसितं स्वात्वा पश्चादुत्करमपां पूरयित्वा ।
 गार्हपत्यस्थानेऽग्निं प्रणीय युञ्जानः प्रथमं मन इत्यष्टौ हुत्वा-
 ऽऽकूतमग्निं प्रयुजं स्वाहेति षड्जुहोति । विश्वोदेवस्य नेतुरिति
 सप्तमीम् ॥२॥ यज्ञियानां समिधां त्रींस्त्रोन् समित्पूलानुपकल्प्य
 प्राक् त्वष्टकृतस्तिष्ठन्तो व्याहृतिपूर्वकं खण्डिलस्यादितस्त्रि-
 भिरनुवाकैरेकैकेन स्वाहाकारान्ताभिरादधति ॥३॥ आपो-
 हिष्ठीयाभिः कौसितान्मार्जयित्वा धानाभिर्ब्राह्मणान् स्व-
 स्तिवाचयन्ति धानाभिर्ब्राह्मणान् स्वस्ति वाचयन्ति ॥४॥

इति षष्ठः खण्डः समाप्तः ।

के गायत्री आदि सात छन्दों को पूर्व २ की ओर स्थापित करे । और दक्षि-
 णाग्नि की जगह में पूर्वाभिमुख गाड़ी के आकार वाला कौसित नाम छोटा
 गढ़ा खोदे पश्चात् उत्तर कुण्ड औरों के अनुसार बनाके इन तीनों में
 जल भर देवे । फिर उस वेदि से पश्चिम में गार्हपत्य के सदृश मण्डलाकार स्थ-
 विहल बना के उस पर अग्निको स्थापित करके आचार प्राज्यभागानुक्तियों के अन-
 तन्तर (युञ्जानः प्रथममनः०) इत्यादि आठ (आकूतमग्निं०) इत्यादि छः और (वि-
 श्वोदेवस्यनेतुः०) इस की मिला के सब १५ पन्द्रह आहुति घी की देवे ॥२॥ प-
 लाश वेल आदि यज्ञिपद्यों की समिधाओं के तीन तीन पूला (मूठार, भर पृ-
 थक् २ प्रति पुरुष के) बांध कर स्विष्टकृत आहुति से पहिले सब खड़े हुए वेद
 में कहे अग्निस्थापन प्रकरण के आदि के तीन अनुवाकों के साथ व्याहृतिल-
 गा के उन तीनों अनुवाकों से एक २ समित्पूला अग्नि में चढ़ावे ॥३॥ (आपोहि-
 ष्ठा०) इत्यादि तीन ऋचाओं से आहवनीयादि स्थानों में दर्भ मुष्टि रूप छ-
 न्द आदि जिनमें जल भरा था उन सब का मार्जन करके तीन आदि ब्राह्म-
 णों को एक २ करके भुंजे हुए जी दे दे कर स्वस्तिवाचन करावे ॥ यह छठा ख-
 ण्ड पूरा हुआ ॥

अथोपनिषदर्हाः । ब्रह्मचारी सुचरिती मेधावी कर्मकृ-
दुनदः प्रियो विद्यां विद्यथान्वेष्यन् ॥१॥ तानि तीर्थानि ब्र-
ह्मणः ॥२॥ भार्यां विन्दते ॥३॥ कृत्तिकास्वातिपूर्वरिति वरयेत्
॥४॥ रोहिणीमृगशिरःश्रवणश्रविष्ठोत्तराणीत्युपयमे तथोद्वाहे
यद्वा पुण्योक्तम् ॥५॥ पञ्चविवाहकारकाणि भवन्ति वित्तं
रूपं विद्या प्रज्ञा वान्धवइति ॥६॥ एकालाभे वित्तं वि-
सृजेद् द्वितीयालाभे रूपं तृतीयालाभे विद्यां प्रज्ञायां वान्ध-
वइति च विवहन्ते ॥ ७ ॥ वन्धुमतीं कन्यामरुष्टमैथुना

अब सातवें खण्ड में विवाह विषय का आरम्भ है। इन में प्रथम वेदान्ती
पनिषद् पढ़ाने योग्य अधिकारी निम्न लिखित सात होते हैं । ब्रह्मचारी १।
मदाचारी २। बुद्धिमान् ३ सन्ध्यातर्पणादि कर्म अद्वा से करने वाला ४ धनदेने
वाला ५ आचार्य को प्रिय ६ और किसी विद्या के बदले विद्यालाहनेवाला ७॥१॥
ये ब्रह्मचारी आदि वेद नामक शब्द ब्रह्म के तीर्थ हैं अर्थात् ऐसों को वेद प-
ढ़ाने चाहिये ॥२॥ आगे लिखे प्रकार से भार्या स्त्री को प्राप्त हो ॥३॥ कृत्तिका
स्वाति और पूर्वाषाढा आदि तीनों पूर्वा नक्षत्रों में विवाह करे ॥४॥ रोहि-
णी मृगशिर श्रवण धनिष्ठा और तीनों उत्तरा ये नक्षत्र उपयसनाम वाग्दान श्री-
र विवाह के लिये अच्छे हैं । अथवा पाराशरी आदि उयोत्तिप के अ-
च्छे ग्रन्थों में कहे नक्षत्रों में विवाह करे ॥५॥ कन्या का पिता वर की पांच द-
शा देवे १-धन । २-रूप । ३-विद्या । ४-बुद्धि । ५-कुटुम्ब । रूप कहने से कारो अन्धे
आदि का निषेध और वान्धव के साथ कुलीनता भी आजाती है ॥६॥ यदि
पांचो गुण वर में न मिलने हों तो धन को छोड़ दे क्यों कि धन अनित्य है वि-
द्या बुद्धि वाले के पास धन हो जाना सुगम है । दो गुण न मिलते हों तो
रूप को भी छोड़ दे क्यों कि विद्या कुरूपों का भी रूप है । तीसरा न मिले
तो विद्या को भी छोड़ दे क्यों कि बुद्धिमान् होगा तो पीछे भी पढ़ सकता
है तथा नभीपढ़ सके तो भी बुद्धिमान् निर्बुद्धिपदित से अच्छा है तथा बुद्धि और
कुटुम्ब इन दोनों में कुटुम्ब न होने पर भी बुद्धिमान् वर का विवाह कर-
देवे ॥ ७ ॥ जिस के साथ किसी पुरुष का संयोग न हुआ हो भाई जिस के को-

मुपयच्छेत् समानवर्णामसमानप्रवरां यवीयसीं नग्निकां
 श्रेष्ठाम् ॥८॥ विज्ञानमस्याः कुर्यादष्टौ लोष्टानाहरेत् सीता-
 लोष्टं वेदिलोष्टं दूर्वालोष्टं गोमयलोष्टं फलवतो वृक्षस्या-
 धस्ताल्लोष्टं श्मशानलोष्टमध्वलोष्टमिरिणलोष्टमिति ॥९॥
 देवागारे स्थापयित्वाऽथ कन्यां ग्राहयेत् । यदि श्मशानलोष्टं गृ-
 ह्णीयादध्वलोष्टमिरिणलोष्टं वा नोपयमेत् ॥१०॥ संजुष्टां
 धर्मेणोपयच्छेत् ब्राह्मेण शौत्केन वा ॥११॥ शतमित्तिरथं द-
 द्याद्गोमिथुनं वा ॥ १२ ॥

इति सप्तमः खण्डः समाप्तः ॥

हे विद्यमान हो जो अपने वर्णों की हो जिस के प्रवर आर्ष अपने से भिन्न हों
 जो ठीक युवति अच्छी हो जिस की काती के स्तन न सगे हों न ऋतुमती हुई
 हो जिस का रूप लावण्य वर्ण अच्छा गोरा हो ऐसी कन्या से विवाह करे ।
 पुरुष की युवावस्था का आरम्भ सोलहवें वर्ष से और स्त्री की युवावस्था का
 आरम्भ ग्यारहवें वर्ष से हो जाता है ॥ ८॥ विधवा वा बन्ध्यादि गुप्त वा अ-
 दूष्ट दोषों की परीक्षा के लिये जुताखंत, होम की वेदि, दूब, गोबर, फल जिस
 में लगते हों ऐसे वृक्ष के नीचे का, नरघट, मार्ग और ऊपर भूमि इन सब में
 से एक २ नदी का ढेला लेकर किसी देवता के मन्दिर में आठों ढेला रखे
 और उन में से एक ढेला कन्या से उठवावे यदि नरघट, मार्ग और ऊपर के
 ढेलों में से उठालेवे तो उस के साथ विवाह न करे ॥ ९ । १० ॥ ब्राह्म वा
 आर्ष विवाह की रीति से उस के साथ विवाह करे । एक बैल एक गौ वा दो
 बैल दो गौ वा उन का मूल्य कन्या के पिता की देकर विवाह करना आर्ष
 कहाता है ॥ ११॥ शतमान सुवर्णमूषित रथ वा दोगी-दो बैल अथवा सुवर्ण-
 दि के आभूषण भोजन के वस्तु आदि वा वस्त्र देकर विवाह करे ये सब प-
 चान्तर में विकल्प हैं ॥ १२ ॥ यह सातवां खण्ड पूरा हुआ ॥

पश्चादग्नेश्चत्वार्यासनान्युपकल्पयेत् ॥ १ ॥ तेषूपविशन्ति
 पुरस्तात्प्रत्यङ्मुखो दाता पश्चात्प्राङ्मुखः प्रतिग्रहीता दा-
 तुरुत्तरतः प्रत्यङ्मुखी कन्या दक्षिणत उदङ्मुखो मन्त्रकारः
 ॥ २ ॥ तेषां मध्ये प्राक्तूलान्दर्भानास्तीर्य कांस्यमक्षतोदके-
 न पूरयित्वाऽविधवास्मै प्रयच्छति ॥ ३ ॥ तत्र हिरण्यम् ॥ ४ ॥
 अष्टौ मङ्गलान्यावेदयति ॥ ५ ॥ मङ्गलान्युक्त्वा ददामि
 प्रतिगृह्णामीति त्रिब्रह्मदेया पिता भ्राता वा दद्यात् ॥ ६ ॥
 सहिरण्यानञ्जुलीनावपति धनायत्वेति दाता पुत्रेभ्यस्त्वेति
 प्रतिग्रहीता तस्मै प्रत्यावयति ॥ ७ ॥

अरणी से मन्थन करके निकालकर स्थापित किये अग्निसे पश्चिममें चार आसन
 बिछावे ॥ १ ॥ उन आसनों पर निम्न रीतिसे बैठे। अग्नि से पूर्वमें पश्चिमाभिमुख
 कन्यादाता बैठे अग्नि से पश्चिम में पूर्वाभिमुख वर वा पूज्य बैठे दाता से
 उत्तर में पश्चिम को मुख कर कन्या बैठे और अग्नि से दक्षिण में उत्तर को
 मुख कर मन्त्र पढ़ने वाला पुरोहित वा आचार्य बैठे ॥ २ ॥ उन सब के बीच
 पूर्व को लिन का अग्रभाग हो ऐसे कुश बिछाकर अक्षतों सहित जल से कांसे
 का पात्र भर के सौभाग्यवती जो विधवा न हो दाता के हाथ में देवे ॥ ३ ॥
 उस पात्र में सुवर्ण डाले ॥ ४ ॥ अविधवा स्त्री आठ वस्तु मङ्गल रूप दाता को
 देवे ॥ ५ ॥ कन्या का पिता भाई वा नाना जो संरक्षक हो वह जिसका वर
 से मूल्य नहीं लिया हो ऐसी ब्रह्मदेया कन्या को तीनवार अक्षत सुवर्ण डाले
 जल पात्र सहित (ददामि) कहकर देवे और वर तीन वार (प्रतिगृ-
 ह्णामि) कहकर कन्या को स्वीकार करे ॥ ६ ॥ यदि कुछ धनादि वर से ले-
 कर कन्या के पिता ने विवाह किया हो तो वर सुवर्णादि धन अंजली में ले
 और कन्या का पितादि कन्या का हाथ पकड़ के कहे कि (धनायत्वाददामि)
 तथा वर अपने हाथों में लिया सुवर्णादि कन्या के पिता को देता हुआ क-
 न्या का हाथ पकड़े और कहे कि (पुत्रेभ्यस्त्वा प्रतिगृह्णामि) इस प्रकार
 धन और कन्या का दोनों लौट फेर कर लें ॥ ७ ॥

चतुर्व्यतिहृत्य ददाति ॥ ८ ॥ सावित्रेण कन्यां प्रतिगृह्य
प्रजापतयइति च कइदं कस्माअदादिति सर्वत्रानुषजति
कामैतत्तइत्यन्तम् ॥ ९ ॥ समाना वाआकृतानीति सह ज-
पन्त्याऽन्तादनुवाकस्य ॥ १० ॥ खेरथस्यखेऽनसः खेयुगस्य-
शतक्रतो । अपालामिन्द्रस्त्रिःपूत्यवकृणोत्सूर्यत्वचम् ॥ इ-
ति तेनोदकांस्येन कन्यामभिषिञ्चेत् ॥ ११ ॥ इति ८ खण्डः ॥
षडध्या भवन्त्यृत्विगाचार्यो विवाहो राजा स्नातकः प्रि-
यश्चेति ॥ १ ॥ अप्राकरणिकान्वा परिसंवत्सरादहंयन्ति ॥ २ ॥
प्राकरणिकाः कर्त्तारः सदस्याश्च वृताः ॥ ३ ॥ न जीवत्पि-

चार बार देन लेन की लीट फेर दोनों करें ॥ ८ ॥ वर सविता देवता वाले
(देवस्यत्वाऽ) इत्यादि प्रत्येक मन्त्र से कन्या को स्वीकार करे तथा प्रत्येक
मन्त्र के अन्त में (कइदं०) से लेकर (कामैतत्ते) पर्यन्त मन्त्र को सब की सा-
थ जोड़ लेवे ॥ ९ ॥ फिर अनुयाक के अन्त पर्यन्त शेष बचे (सगानावाआकू-
तानि) इत्यादि मन्त्रों को कन्या के देने लेने वाले सब लोग एक साथ ही
जपें अर्थात् स्पष्ट बोलें ॥ १० ॥ फिर वर (खेरथस्य०) इत्यादि ऋचा पढ़के
कान्हे की पात्र में पूर्व से रखे अक्षतों सहित जल से कन्या की शिरपर अभि-
षेक करे ॥ ११ ॥ यह आठवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भा०-अब इस नवम खण्ड में मधुपर्क सम्प्रन्धी विचार कहते हैं । ऋत्वि-
ज्-पुरोहित १ । उपनयन कराके वेद पढ़ाने वाला आचार्य २ । जानाता वर
३ । राजा सृद्धोभिषिक्त ४ । ज्ञातक ब्रह्मचर्य समाप्त करने वाला ५ । श्वशु-
रादि प्रिय ६ ये छः पुरुष मधुपर्कादि के विधान से शास्त्रानुसार पूज्य होते हैं
॥ १ ॥ विवाह तथा अग्निष्टोमादि यज्ञों के समय तो मधुपर्क से पूजन का
प्रकरण है वहां तो वर आदि का मधुपर्कविधि से पूजन होना ही इष्ट है ।
परन्तु विना प्रकरण के अकस्मात् ऋत्विजादि आर्वे तो एक वर्ष में एक ही वा-
र मधुपर्क द्वारा पूजन करे अर्थात् एक वर्ष में द्विवार पूजन न करे ॥ २ ॥ यज्ञ
कर्म में वरणा किये ऋत्विज् और सदस्य लोग भी प्राकराणिक होते हैं उन स-
मय उन के वरण से पहिले मधुपर्क द्वारा पूजन होना उचित है ॥ ३ ॥ जिस

तृकोऽर्घ्यं प्रतिगृह्णीयादिति श्रुतिरथवा प्रतिगृह्णीयात् ॥४॥
 अथैनमर्हयन्ति ॥ ५ ॥ कांस्ये चमसे वा दधि मधुचानीय
 वर्षीयसाऽपि धायाचमनीयप्रथमैः प्रतिपद्यन्ते ॥ ६ ॥ विरा-
 जोदोहोऽसि विराजोदोहमशीय मयिदोहः पद्यायै विराजः
 कल्पतामित्येकैकमाह्रियमाणं प्रतीक्षते ॥ ७ ॥ सावित्रेण
 विष्टरं प्रतिगृह्ण-अहंवर्षमसदृशानामुद्यतामिवसूर्यः ।
 इदंतमभितिष्ठामि योमाकश्चाभिदासति ॥ इति जपति ॥८॥
 राष्ट्रभृदसीत्याचार्य आसन्दीमनुमन्त्रयते ॥९॥ मात्वादोष-
 इत्यधस्तात्पादयोर्विष्टरमुपकर्षति ॥१०॥ विष्टर आसीनायै-
 कैकं त्रिःप्राह ॥११॥ नैव सोऽइत्याह नम आर्पेयायेति श्रुतिः
 स्पृशत्यर्घ्यम् ॥१२॥ पाद्येन पादौ प्रक्षाल्य सावित्रेण मधु-

का पिता जीवित हो वह मधुपर्क द्वारा पूजा में विकल्पित है अर्थात्
 वसन्ती पूजा करे वा न करे ऐसा श्रुति में लिखा है ॥ ४ ॥ इन ऋ-
 त्विजादि का पूजन निम्न लिखित रीति से करे ॥ ५ ॥ कांस्य के कटोरे
 में धा प्रणीता के तुल्य चमस पात्र में सद्य और दही का के एक
 बड़े पात्र से ढांप कर आचमनीय जल आदि सहित पूज्य से निकट
 पूजक आवे ॥६॥ आचमनादि के लिये लाये एक २ जलादि वस्तु को पूज्य ऋत्वि-
 गादि पुरुष (विराजो दोहोऽसि०) इत्यादि मन्त्र पढ़ता हुआ देखे ॥७॥ फिर
 (देवस्यरवा०) इस सविता देवता वाले मन्त्र को पढ़ के विष्टर को हाथ में ले-
 के (अहं वर्षम०) मन्त्र को जपे ॥८॥ आचार्यादि पूज्य बैठने को लाये कुर्सी घौ-
 की वा सिंहासनादि को देखता हुआ (राष्ट्रभृदसि०) मन्त्र पढ़े ॥९॥ (मात्वादो-
 ष) इत्यादि मन्त्र पढ़ के पूज्य आचार्यादि दोनों पणों के नीचे विष्टर को द-
 वावे ॥१०॥ (आचमनीयम्) (विष्टरः) इन दोनों को देता हुआ पूजक एक २ बार
 दोले परन्तु अर्घ्य पाद्यादि देता हुआ (पाद्यं पाद्यं पाद्यम्) इत्यादि प्रकार
 तीन २ बार कहे ॥११॥ फिर पूज्य (नैव सोः) कहे कि मैं पूजाई नहीं किन्तु (नम-
 आर्पेयाय) मैं ऋषियों को नमस्कार करता हूँ क्योंकि यहां भी वेही पूज्य हैं
 ऐसा श्रुति में कहा है फिर अर्घ्य का स्पर्श करके ग्रहण करे ॥१२॥ पाद्य जल से

पक्वं प्रतिगृह्य प्रतिष्ठाप्यावसाध्य-नमोरुद्राय पात्रसदं न-
मो रुद्राय पात्रसदं इति प्रादेशेनाध्यधि प्रतिदिशं प्रदक्षिणं
सर्वतोऽभ्युद्दिशति ॥१३॥ मधुवाताऋतायतइति तिसृभिरङ्ग-
गुल्या प्रदक्षिणं प्रत्यृचं त्रिरायौति ॥१४॥ अमृतोपस्तरणम-
सीत्युपस्तरति ॥१५॥ सत्यंयशःश्रीर्मयि श्रीः श्रयतामिति म-
धुपक्वं त्रिःप्राशनाति ॥१६॥ अमृतापिधानमसीत्याचामति ॥१७॥
सुहृदेऽवशिष्टं प्रयच्छति ॥१८॥ असिपाणिर्गां प्राह ॥१९॥ हतोमे
पाप्मा पाप्मानं मेहत ओंकुरुत इति प्रैष्यति ॥ २० ॥ चतुरो
ब्राह्मणान्नानागोत्रान्भोजयेत् ॥ २१ ॥ पश्वङ्गपायसं वा

प्रथम दहिना फिर वान पग की धी कर (देवत्यत्वा०) इस सधिता देवता वाले
सन्त्र से दाता के तीन बार कहने पर मधुपर्क की दहिने हाथ में ले कर वाम
हाथ में स्थापित करके दहिने हाथ की तर्जनी और अंगुष्ठ द्वारा थोड़ा २ क-
पर २ की ईशान से लेकर प्रत्येक दिशा में प्रदक्षिण क्रम से (नमोरुद्राय०) स-
न्त्र को प्रत्येक दिशा के साथ बार २ पढ़ता हुआ मधुपर्क के धाँटा देवे ॥१३॥
फिर (मधुवाताऋतायते०) इत्यादि तीन ऋचा पढ़ २ के दहिने हाथ की अ-
नामिका अंगुली से मधुपर्क को मिलावे ॥१४॥ फिर (अमृतोप०) सन्त्र पढ़ के
उपस्तार रूप आचमन प्रथम करे ॥१५॥ फिर (सत्यंयशः०) सन्त्र को पढ़ के ती-
न बार थोड़ा २ लेकर मधुपर्क का प्राशन करे एकवार सन्त्र पढ़ के दोवार तू
ष्णीम् ॥१६॥ तदनन्तर (अमृतापि०) सन्त्र पढ़ के ऊपर से अभिचार रूप आचम-
न करे ॥१७॥ पश्चात् शेष दवे मधुपर्क को अपने किसी प्रिय मित्र की पात्र स-
हित दे देवे ॥१८॥ फिर खड़्ग हाथ में लेकर (गौर्गौर्गैः) ऐसा दाता पूजक
कहे ॥१९॥ यदि संज्ञपन चाहता हो तो पूज्य आचार्यादि (हतोमेपाप्मा०) इ-
त्यादि प्रैषयाख्य यजनान से कहे ॥ २० ॥ (मधुपर्क में पशु संज्ञपन सदा से
ही विकल्पित है । सत्ययुगादि में भी नियत नहीं हैं पर कलियुग में (लोक-
विकृष्टमेवच) इत्यादि मन्वादि के वचनानुसार सर्वथा ही वर्जित है कथमपि
कर्त्तव्यनहीं फिर निम्न २ गोत्र वाले चार ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ २१ अथवा
पशु का अङ्ग रूप पायस नाम खीर मधुपर्क पूजन में करा लेवे क्योंकि दूध भी

कारयेत् नामांसो मधुपर्क इति श्रुतिः ॥ २२ ॥ यद्युत्सृजेत्-
मातारुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः । प्र-
नुवोचंचिकितुषेजनाय मागामनागामदिति बधिष्ट । भूर्भुवः-
स्वरोमुत्सृजतु तृणान्यत्तु ॥ २३ ॥ अथालङ्करणमलङ्करण-
मसि सर्वस्मा अलंभे भूयासम् ॥ २४ ॥ प्राणपानौ मेतर्पय (स-
मानव्यानौ मेतर्पय उदारः पेमेतर्पय) सुचक्षा अहमक्षीभ्यां भू-
यासं, सुवर्चा मुखेन सुश्रुत्कर्णाभ्यां भूयासमिति यथालिङ्ग-
मङ्गानि संमृशति ॥ २५ ॥ अथ गन्धोत्सदने वाससी ॥ २६ ॥
परिधास्ये यशोधास्ये दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्तु । शतं जीवेम
शरदः पुरुचीराय रूपोषमभिसंव्ययिष्ये ॥ यशसा माद्यावा-
पृथिवी यशसेन्द्रावृहस्पती । यशोभगश्च मारिष्यद्यशोमा प्रति
मुच्यताम् ॥ इत्यहत् वासः परिधत्ते ॥ २७ ॥ कुमार्याः प्रमदने

पशु का अंश होने से उस में कारका रूप से सभी विद्यमान है । श्रुति में लिखा
है कि मांस के बिना मधुपर्क नहीं होता सो खीर बना लेने परभी पशुवंश होने
से मधुपर्क का श्रुत्यर्थ चरितार्थ है ॥ २२ ॥ तथा विकल्पित पक्षान्तर में गौ को
छोड़ देना चाहे तो (मातारुद्राणां०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के छुड़वां देवे ॥ २३ ॥
फिर (अलंकरणम्०) मन्त्र पढ़ के मालादि आभूषण पहने (प्राणपानौ०)
पढ़ के नासिका के दोनों छिद्रों का स्पर्श करे (समानव्या०) से नाभिका
(उदानरूपे०) से कण्ठ का (सुचक्षा०) से दोनों आंखों का (सुवर्चा मु०)
से मुख का और (सुश्रुत्कर्णाभ्यां०) से दोनों कानों का स्पर्श करे प्रथम
दहिने फिर बायें कान को दहिने हाथ से (सर्वत्र) स्पर्श करे ॥ २५ ॥
फिर ज्ञातक पुरुष पूर्व कही ज्ञानविधि से पहिले ही मधुपर्क प्राशन
करलेने पर विवाह के समय शरीर में चन्दन और गुग्गुलु तैलादि सहित च-
वटन लगावे ऐसा किन्हीं आचार्यों का मत है और विवाहानन्तर ज्ञानवि-
धि करे । २६ ॥ और (परिधास्ये०) मन्त्र से चीरेदार नयी धोती पहिने त-
था (यशसा०) मन्त्र से एक चीरेदार नया डुपट्टा ओढ़े ॥ २७ ॥ कुमारी

भगमर्थमणं पूषणं त्वष्टारमिति यजति ॥ २८ ॥ प्राक्स्विष्ट-
कृतश्चतस्रो अविधवानन्दी रूपवादयन्ति ॥ २९ ॥ अभ्यन्तरे
कौतुके देवपत्नीर्यजति ॥ ३० ॥ इति नवमः खण्डः समाप्तः ॥

प्रागुदञ्चं लक्षणमुद्धृत्यावोक्ष्य, स्थण्डिलं गोमयेनोप-
लिप्य मण्डलं चतुरस्रं वा, अग्निं निर्मथ्याभिमुखं प्रणयेत्
(तत्र ब्रह्मोपवेशनम्) ॥ १ ॥ दर्माणां पवित्रे मन्त्रवदुत्पाद्ये-
मंस्तोममर्हत्तइत्यग्निं परिसमुह्य पर्युक्ष्य परिस्तीर्य पश्चा-
दग्नेरेकवद्वर्हिः स्तृणाति ॥ २ ॥ उदक्प्राक्तूलान्दर्मान्प्र-
कृष्य दक्षिणांस्तथोत्तरानग्रेणाग्निं दक्षिणैस्तृणानवस्तृणा-

जिस के साथ विवाह होता हो उस के क्रीड़ा स्थान में भग अर्थना पूषा और
त्वष्टा इन देवताओं के नाम से घी की आहुति देवे ॥ २८ ॥ स्विष्टकृत आहु-
ति से पहिले जो विधवा न हों ऐसी चौभाग्यवर्ती चार स्त्रियां दोल आदि
सांनक्षिक वाजे बजावें और संगत रूप भजन गावें ॥ २९ ॥ कन्या का पिता वा
भाई घर के भीतर नियत किये कौतुकागार कौतुक स्थान में (देवपत्नीभ्यः
स्वाहा) मन्त्र से होम करे अथवा सिनीवाली से लेकर कुहूपर्यन्त देव पत्नियों
के लिये आहुति देवे ॥ ३० ॥ यह नवम खण्ड समाप्त हुआ ॥

पश्चिम से पूर्व की ओर को उदक्संस्थ पांच रेखा और दक्षिण से उत्तर
को एक रेखा बीच में स्पष्ट वा स्तुव मूल द्वारा कर के वहां से कुछ मट्टी अ-
नामिकांगुष्ठ द्वारा ईशान में फेंक कर थोड़ा जल सेचन करके बिछाये हुई
शुद्ध मट्टी की गोलाकार वा चौकोर वेदी को गौ के गोवर से लीप कर उस में अ-
रणी द्वारा सन्थन करके अथवा पुरुष १ ख० १९ सू० १ । २ में कहे जन्मान्नि
को पूर्वोभिमुख हो के स्थापित करे (उस से दक्षिण में वरण करके ब्रह्मा की
बैठावे) ॥ १ ॥ मन्त्र पूर्वक दामों के पवित्र वना के (इसंस्तोमं) मन्त्र से
अग्नि के भव और काष्ठ के ईशान कोण से लेके प्रदक्षिण सध ओर जल सेचन
कर सब ओर कुश विका के अग्नि से पश्चिम में एकवृत्ति कुश बिछावे ॥ २ ॥ वेदि
से उत्तर और दक्षिण में पूर्व को अग्रभाग करके अग्नि से पूर्व में उत्तर की त-

ति ॥ ३ ॥ दक्षिणतोऽग्नेर्ब्रह्मणे संस्तृणात्यपरं यजमानाय
 परचाहुँ पत्न्यै अपरमपरं शाखोदकधारयोर्लाजाधार्याश्च
 पश्चादयुग्मधारस्य च ॥ ४ ॥ स्योनापृथिविभवेत्येतयाऽव-
 स्थाप्य शमीमयीः शम्भ्याः कृत्वाऽन्तर्गोष्ठेऽग्निमुपसमाधाय
 भर्ता भार्यामभ्युदानयति ॥ ५ ॥ वाससोऽन्ते गृहीत्वा-अ-
 धोरक्षुरपतिघ्न्येधि शिवापशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः । वी-
 रसूदेवकामा स्योना शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ इत्य-
 भिपरिगृह्याभ्युदानयति ॥ ६ ॥ उत्तरेण रथं वाऽनो वाऽनु-
 परिक्रम्यान्तरेण उवलनवहनावतिक्रम्य दक्षिणस्यां धुर्युत्त-
 रस्य युगतनमनोऽधस्तात्कन्यामवस्थाप्य - शम्भ्यामुत्कृष्य

या परिचन में दक्षिणों के साथ मिलते हुये उत्तराय बिछावे ॥ ३ ॥ अग्नि से दक्षिण में ब्रह्मा के लिये बिछावे आसन पर और ब्रह्मा से पश्चिम में यज-
 मान के आसन पर तथा यजमान से पश्चिम में पत्नी के आसन पर कुश बि-
 छावे । ब्रह्मा यजमान और पत्नी से दक्षिण में आस पक्षव शाखा धारण करने
 वाले के लिये और उस से पश्चिम में जल भरे कलश की धारण करने वाले
 के लिये कुश बिछावे तथा इन से पश्चिम २ की लाजा धारण करने
 वाली सौभाग्यवती स्त्री और हल का जुआ [युग] धारण करने वाले के
 लिये कुश बिछावे ॥ ४ ॥ फिर (स्योनापृथिवि०) सन्त्र से शाखाधार आदि
 चारों को स्थापित करके पहिले से न बनायी हों तो शमी- (छोंकर) वृक्ष
 की शम्भ्या प्रादेश मात्र (सैल) बना कर कोठे के भीतर अग्नि को प्रज्वलित
 करके निम्न रीति से वर अपनी पत्नी को अग्नि के समीप लावे ॥ ५ ॥ पत्नी के
 हुपटे का छोर पकड़ के (अधोरक्षु०) इत्यादि सन्त्र पढ़े पश्चात् दोनों
 बाहु से उठा कर लावे ॥ ६ ॥ खड़े हुये रथ वा शकट (ककड़ा) के उत्तर से
 दक्षिण की ओर की परिक्रमा कर वा अग्नि और गाढ़ी के बीच से निकल के
 युग (जुआं) के जो दोनों भाग बैलों के कन्धे पर रहते हैं उन के बीच की
 धूर कहते हैं उस धूर और शम्भ्या (सैल) के छिद्र के बीच उत्तर की नीचे क-

हिरण्यमन्तर्धाय हिरण्यवर्णाः शुचयइति तिसृभिरद्विरभि-
 षिच्य, अत्रैव वाणशब्दं कुरुतेति प्रेष्यति ॥७॥ अयास्यै वा-
 सः प्रयच्छति-या अकृन्तन्या अतन्वन्या आवन्या अवाह-
 रन् । याश्च ग्ना देव्योऽन्तानभितोऽततनन्त । तारत्वा देव्यो
 जरसे संव्ययन्त्वायुष्मतीदं परिधत्स्व वासः ॥ इत्यहंतं
 वासः परिधात्यान्वारभ्याघारावाज्यभागौ हुत्वा । अग्नये
 जनविदे स्वाहेत्युत्तरार्द्धे जुहोति । सोमाय जनविदे स्वाहेति
 दक्षिणार्द्धे । गन्धर्वाय जनविदे स्वाहेति मध्ये ॥८॥ युक्तो वह,
 यदाकूतमिति द्वाभ्यामग्निं योजयित्वा नक्षत्रमिष्ट्वा नक्षत्र
 देवतां यजेत्तिथिं तिथिदेवतामृतुमृतुदेवतां च ॥ ९ ॥

न्या को स्थित कर शय्या को छिद्र से निकाल के उस युग छिद्र में छवर्णां धरके
 (हिरण्यवर्णाः०) इत्यादि तीन ऋचा पढ़ २ के छिद्र के ऊपर से कुशों वा
 आस के पत्तों द्वारा कन्या के शिर पर अभिवेक करे और इसी अवसर में (वा-
 ण शब्दं कुरुत) ऐसे वाक्य द्वारा घादिन्न (वाजे) बजाने की आज्ञा देवे ॥७॥
 फिर पत्नी को अग्नि के पास उठाकर लावे और (या अकृन्तन्०) इत्यादि
 मन्त्र पढ़ के चोरदार साड़ी [जो किसी स्थान में से फाड़ी न गयी हो] प-
 त्नी को पहनावे । तदनन्तर पत्नी के अन्वारम्भ करने पर प्रजापति और इन्द्र
 देवता के लिये दो आघार और अग्नि तथा सोम देवता के लिये दो आच्य
 भाग की आहुति दे कर (अग्नयेजन०) से वेदिस्थ प्रज्वलित अग्नि के उत्त-
 रार्द्ध में (सोमाय जन०) से दक्षिणार्द्ध में और (गन्धर्वाय जन०) से बीच अ-
 ग्नि में आहुति देवे ॥ ८ ॥ पश्चात् (युक्तो वह० । यदा कूतं०) इन दो मन्त्रों
 से अग्नि देवता को युक्त नाम संशोधित करके जिस तिथि में वह काम निवा-
 ह होता हो उस दिन जो नक्षत्र हो उस नक्षत्र का जो देवता हो तथा प्रति-
 पदादि जो तिथि हो उस के नाम से और उस तिथि के देवता के नाम से
 तथा उस समय जो ऋतु हो और उस ऋतु का जो देवता हो उन ऋतु के ना-

सोमोददहन्धर्वाय गन्धर्वोदददग्नये । रयिं च पुत्रांश्चादाद-
 ग्निमंह्यमथोद्माम् ॥ अग्निरस्याः प्रथमो जातवेदाः सो-
 ऽस्याः प्रजां मुञ्चतु मृत्युपाशात् । तदिदं राजा वरुणोऽनु-
 मन्यतां यथेदं स्त्रीपोत्रमग्नम रुद्रियाय-स्वाहा-इति ॥ हि-
 रिरण्यगर्भ इत्यष्टाभिः प्रत्यृचमाज्याहुतीर्जुहुयात् ॥ १० ॥ ये-
 न च कर्मणेच्छेत्तत्र जयान्जुहुयात् जयानां च श्रुतिस्तां
 यथोक्ताम् । आकूत्यै त्वा स्वाहा । भूत्यै त्वा स्वाहा । प्रयुजे
 त्वा स्वाहा । नभसे त्वा स्वाहा । अर्यम्णे त्वा स्वाहा । समृद्ध-
 ध्यै त्वा स्वाहा । जयायै त्वा स्वाहा । कामाय त्वा स्वाहेत्यृ-
 चास्तोमं प्रजापतयेति च ॥ ११ ॥ शुचिः प्रत्यङ्मुहुपयन्ता
 तां-समीक्षस्वेत्याह ॥ १२ ॥ तस्यां समीक्षमाणार्था जप-
 ति-ममव्रते ते हृदयं दधातु मम चित्तमनुचित्तं तेऽस्तु ।
 मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ठा नियुनक्तु म-
 ह्यम् ॥ इति ॥ १३ ॥

म से छः आहुति देवे ॥ ९ ॥ पश्चात् (सोमोददह०) इत्यादि दो ऋचाओं
 से एक आहुति दे कर (हिरण्यगर्भः०) इत्यादि आठ ऋचाओं से घी की आ-
 ठ आहुति देवे ॥ १० ॥ जिस कर्म से कार्य की निधि चाहता हो वहाँ-२ ज-
 या होन करे । जया संज्ञक आहुतियों की यथोक्त श्रुति हैं कि शत्रु के विना-
 शार्थ भी जया होन होता है । (आकूत्यै०) इत्यादि जया होन की आठ
 आहुति दे कर (ऋचास्तोमं०) मन्त्र से नवमी और (प्रजापतये स्वाहा)
 से दशमी आहुति देवे ॥ ११ ॥ पवित्र हुआ वर (अर्थात् श्री के साथ कामा-
 मिशाष रहित धर्मनिष्ठ मन की रख के) परिचय की मुख करके पत्नी से कहे
 (समीक्षस्व) मुझे देखो ॥ १२ ॥ वह पत्नी वर को देखती हो तब वर (म-
 मव्रतेते०) इत्यादि मन्त्र को पत्नी की ओर देखता हुआ पढ़े ॥ १३ ॥

कानामासीत्थाह ॥१४॥ नामधेये प्रोक्ते-देवस्य त्वा सवितुः प्र-
सवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां हस्तं गृह्णाम्यसाविति
हस्तं गृह्णन्नाम गृह्णाति । प्राङ्मुख्याः प्रत्यङ्मुख ऊर्ध्व-
स्तिष्ठन्नासीनाया दक्षिणमुत्तानं दक्षिणेन नीचास्तिमरि-
क्तेन ॥ यथेन्द्रो हस्तमग्रहीत्सविता वरुणो भगः । गृह्णामि ते सौभ-
गत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासत् । भगो अर्यमा सविता
पुरन्धिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ॥ याग्रे वाक्समवदत् पुरा
देवासुरेभ्यः । तामय गाथां गास्यामो यास्त्रीणामुत्तमं मनः
॥ सरस्वती प्रेदमव सुभगे वाजिनीवति । यां त्वा विश्वस्य
भूतस्य भव्यस्य प्रगायास्यस्याग्रतः ॥ अमोऽहमस्मि सा त्वं
सा त्वमस्याप्यमोऽहम् । द्यौरहं पृथिवी त्वमृक्त्वमसि सा-
माहम् । रेतोऽहमस्मि रेतो धत्तम् ॥ ता एव विवहावहै पुंसे
पुत्राय कर्तवै । श्रिये पुत्राय वेधवै । रायस्पोषास्य सुप्रजा-
स्त्वाय सुवीर्याय ॥१५॥ अभिदक्षिणमानीयाग्नेः पश्चात्-ए-
तमश्मानमातिष्ठतमश्मेव युवां स्थिरौ भवतम् । कृण्वन्तु
विश्वेदेवा आयुर्वां शरदः शतम् ॥ इति दक्षिणाभ्यां पद्भ्या

इस के पश्चात् वर कन्या से कहे कि (का नाम सितुस्तरा क्या नाम है ॥१४॥ जब कन्या
अपना नाम बोले तब (देवस्य त्वा) मन्त्र पदके निम्न रीतिसे कन्या का हाथ पकड़े
और मन्त्र के अन्त में पड़े (असौ) शब्द के स्थान में कन्या का नाम सर्वोचना-
न्त बोले । कन्या का मुख पूर्व की वर की पश्चिम की हो कन्या बैठी हो वर
खड़ा हो कन्या का दहिना हाथ रीतो उत्तान ऊपर की और वर के दहिने
हाथ में कोई फलादि हो इस प्रकार अपने दहिने हाथ से कन्या का दहिना
हाथ अंगुठा अंगुलियों सहित पकड़के (यथेन्द्रो हस्तमग्रहीत्) इत्यादि मन्त्र पढ़े ॥१५॥
अन्य कोई पुरुष कन्या को वर से दक्षिण में और अग्नि से पश्चिम में खड़ी करके
कन्या वर दोनों के दहिने पगों को एक पत्थर की शिला पर धरवाता हुआ (ए-

मश्मानमास्थापयति ॥१६॥ यथेन्द्रः सहेन्द्राण्य । अवारुहद्ग-
न्धमादनात् । एवं त्वमस्मादश्मनोऽवरोह सह पत्न्या
॥ आरोहस्व समे पादौ प्रपूर्व्यायुष्मती कन्ये पुत्रवती भव ॥
इत्येवं द्विरास्थापयति ॥१७॥ चतुःपरिणयति ॥१८॥ समितं संक-
ल्पेथामिति पर्याये पर्याये ब्रह्मा ब्रह्मजपंजपेत् ॥ १९ ॥

इति दशमः खण्डः ॥

ततो यथार्थं कर्मसंनिपातो विज्ञेयः ॥१॥ अर्यम्णेऽग्नये पू-
ष्णि (ऽग्नये) वरुणाय च ब्रीहीन्धवान्वाऽभिनिरूप्य प्रोक्ष्य
लाजा भृञ्जति ॥२॥ मात्रे प्रयच्छति सजाताया अविधवायै
॥ ३ ॥ अथास्यै द्वितीयं वासः प्रयच्छति तेनैव मन्त्रेण ॥४॥

तमश्मान०) इत्यादि मन्त्र पढ़े ॥१९॥ फिर (यथेन्द्रः स०) मन्त्र पढ़ के दोनों के
पगों को नीचे उतरवावे । पश्चात् उक्त प्रकार (एतमश्मान०) मन्त्र से फिर पा-
याण शिलापर दोनों के दहिने पग धरा के (यथेन्द्रः०) मन्त्र से फिर उतरवा
वे ऐसे दो बार करके ॥१७॥ पश्चात् चार बार अग्नि के प्रदक्षिण परिक्रमा आ-
गे कहे लाजाहोम के साथ कन्या वर दोनों करें ॥१८॥ और (समितं संकल्पेथां०)
मन्त्र का प्रत्येक परिक्रमा के साथ एकवार ब्रह्मा जप करे ॥१९॥ यह दशवां ख-
ण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—लिप कर्म का जहां प्रयोजन हो उसी अवसर में उस का अनु-
ष्ठान करना चाहिये । अर्थात् सूत्रकार किसी अन्यत्र करने के काम को अन्यत्र
भी कह देते हैं पर करने वाले को मौका देखकर यथावसर करना चाहिये ।
इसी लिये इन सूत्रों में लिखे विवाहादि कर्म सिलसिलेवार पढ़ति घने
विना हो नहीं सकते हैं ॥ १ ॥ अर्यमाग्नि पूषाग्नि और वरुणाग्नि देवता के
लिये लाजा भृञ्जने के अर्थ धान वा जौ का ग्रहण करके लाजा भृञ्जे ॥ २ ॥ वे
भृञ्जे हुए लाजा वा जौ कन्या की माता को वा जो विधवा न हो ऐसी क-
न्यामाता की सहोदर वहिन कन्या की मौसी को देवे ॥ ३ ॥ इस के अन-
न्तर उसी मन्त्र से कन्या को ऊपर से ओढ़ने के लिये द्वितीय वस्त्र देवे ॥४॥

दर्भरज्ज्वा—इन्द्राण्याः संनहनमित्यन्तौ समायम्य पुमांसं
ग्रन्थिं बध्नाति ॥ ५ ॥ सं त्वा नह्यामि पयसा यथिव्याः सं
त्वा नह्याम्यद्विरोषधीभिः । सं त्वानह्यामि प्रजया धनेन सा
संनद्धा सुनुहि भागधेयम् ॥ इत्यन्तरतो वस्त्रस्य योक्त्रेण
कन्यां संनक्षते ॥ ६ ॥ अथैनान्युपकल्पयते—शूपं लाजा इ-
षीका अश्मानमाञ्जनम् ॥ ७ ॥ चतसृभिर्दर्भेषीकाभिः शरेषी-
काभिर्वा समुज्जाभिः सतूलाभिरित्येकैकया त्रैककुभस्या-
ञ्जनस्य संनिष्कृष्य वृत्रस्यासि कनीनिकेति भर्तुदक्षिणमक्षि-
त्रिः प्रथममाङ्कते । तथापरं, तथा पत्न्याः शेषेण तूष्णीम् ॥ ८ ॥
दिशि शलाकाः प्रविध्यति—यानि रक्षांस्यभितो व्रजन्त्यस्या
वध्वा अग्निसकाशमागच्छन्त्याः । तेषामहं प्रतिविध्यामि-
चक्षुः स्वस्ति वध्वै भूपतिर्दधातु ॥ इति ॥ ९ ॥ लाजाः पश्चा-

फिर (इन्द्राण्याः संनहन०) इमं मन्त्र को पढ़ के आचार्य दाभ की रस्सी
के दोनों छोर मिलाकर प्रदक्षिण रीति से गांठ देवे ॥ ५ ॥ फिर (संत्वानह्या
मि०) मन्त्र पढ़ के कन्या के कटि भाग में पहने हुए साड़ी वस्त्र के बीच (दो-
नों छोर ऊपर नीचे वस्त्र रहे) में वह दर्भ रज्ज प्रदक्षिण लपेटे । यह पत्नी
की दीक्षार्थ सेखला है ॥ ६ ॥ इस के अनन्तर सूप खींचे दाभ वा सूँज की चार
सीकें पट्टर की शिखा और आखों में लगाने का सुरमा इन सब को संहार के
रक्खे ॥ ७ ॥ जिन में सूँज और अग्रभाग में फूला घुआ लगा हो ऐसी पूरी लम्बी दाभ
की वा सूँज की चार सीकें के छोर ठीक करके उन एक २ में पहाड़ी सुरमा
लगा के पहिले कन्या एक सीकें से वर की दहिनी आंख में (वृत्रस्यासि०) म-
न्त्र से तीनवार सुरमा लगावे तथा इसी प्रकार बायीं आंख में दूसरी सीकें से
लगावे फिर शेष बची दो सीकें से वर पत्नी की दहिनी बायीं आंखों में दि-
ना मन्त्र सुरमा लगावे ॥ ८ ॥ फिर (यानि रक्षांसि०) मन्त्र पढ़ के सब दि-
शाओं में एक २ सीकें जिन से सुरमा लगाया है प्रदक्षिण क्रम से वर के ॥ ९ ॥

दग्नेरुपसाद्य शमीपर्णैः संसृज्य शूर्पं समं चतुर्धा विभज्या-
 ग्रेणाग्निं पर्याहृत्य लाजाधार्यं प्रयच्छति ॥ १० ॥ लाजा
 भ्राता ब्रह्मचारी वाऽञ्जलिनाञ्जलयोरावपति ॥ ११ ॥ उपस्त
 रणाभिधारणैः संपातं ता अविच्छिन्नैर्जुहुतः—अर्यमणं
 नुदेवं कन्याअग्निमयक्षत । सोऽस्मान्देवोऽअर्यमा प्रेतोमुञ्ज-
 तुसामुतः स्वाहा ॥ तुभ्यमग्नेपर्यवहन्त्सूर्यावहतुनासह ।
 पुनःपतिभ्योजायांदा अग्नेःप्रजयासह ॥ पुनःपत्नीमग्निर-
 दादायुषासहवर्चसादीर्घायुरस्यायः पतिर्जीवातिशरदःशतम् ॥
 इयंनार्युपद्रूते (ऽग्नौ) लाजानावपन्तिका । दीर्घायुरस्तुमे-
 पतिरेधन्तांज्ञातयोमम ॥ इति (जपन्ति) ॥ १२ ॥ एवंयू-

तदनन्तर लाजा नाम धान की खीलों की अग्नि से परिचय में रखके दग में श-
 मी (खोंकर वृक्ष) के पत्ते मिलाकर उन की सूप में चार भाग बराबर पृथ-
 क्ररखके अग्नि को उत्तर पूर्व से प्रदक्षिण लाके लाजा के सूप की दक्षिण की ओर
 खड़ी लाजा धारण करने वाली स्त्री को देवे ॥ १० ॥ कन्या का भाई वा ब्रह्मचारी
 विद्यार्थी कन्यावर दोनों की मिलाई हुई अञ्जुली में लाजा अपनी अञ्जुली में ले-
 कर गिरावे ॥ ११ ॥ लाजा गिराने से पूर्व अञ्जुली में उपस्तार रूप से लगावे फि-
 र लाजा गिरा के खीलों के ऊपर से घी छोड़े वह अभिधारण कहाता है फिर
 बीच में न रुकते हुए चार बांध कर (अर्यमणं) आदि मन्त्रों से दोनों कन्या व-
 र होस करें । (अर्यमणं) से लेकर (प्रजयासह) तक पहिले वर पढ़ें । फिर (पु-
 नः पत्नीम्) मन्त्र की अर्धवर्ग्य पढ़ें (इयं नार्युपद्रूते) मन्त्र की कन्या पढ़ें
 चारों मन्त्रों के पाठ के साथ धीरे २ निरन्तर दोनों कन्या वर लाजा गिराते
 लावे यह एक आहुती हुई ॥ १२ ॥ फिर पूर्व लिखी अग्नि की परिक्रमा दोनों
 एक बार करें परिक्रमा के साथ (सन्तितं) मन्त्र की ब्रह्मा पढ़ें (अर्धा-
 त् वहां क्रम यह है कि प्रथम वेदि में देखा करे अग्निस्थापन, दर्श पवित्र व-
 नाना, अग्नि का परिमूहनादि स्थापनान्त, स्तुवादि पात्रस्थापन, लाजा

षण्णनुदेवं, वरुणनुदेवम् ॥१३॥ येनद्यौरुग्रेत्यादय उद्वाहे हो-
माः । जयाभ्यातानाः संततिहोमा राष्ट्रभूतश्च ॥१४॥ आकू-
तायस्वाहेति जयाः । प्राचीदिग्वसन्तं ऋतुरित्यभ्यातानाः ।
प्राणादपानं सन्तन्विति संततिहोमाः । ऋताषाड् ऋतधामेति
(द्वादश) राष्ट्रभूतश्च ॥१५॥ त्रातारमिन्द्रं, विश्वादित्याइति
मङ्गल्ये ॥ १६ ॥ लाजाः कामेन च रथं स्विष्टकृतमिति ॥१७॥
अथैनां प्राचीं सप्तपदानि प्रक्रमयति । एकमिषे । द्वेऊर्जे ।
त्रीणि प्रजाभ्यश्चत्वारि रायस्पोषाय । पञ्च भवाय । षड् ऋ-
तुभ्यः । सखासप्तपदीभव सुमृडीकासरस्वती । मातेव्योमसंह-
शि ॥ विष्णुस्त्वामुन्नयत्विति सर्वत्रानुषजति ॥१८॥ पश्चाद-
ग्नेरोहिते चर्मण्यानडुहे प्राग्ग्रीवे लोमतो दर्भानास्तीर्य तेषु

(नर्वपणादि, सूप आदि का स्थापन, फिर आन्वयग्रहणादि समिदाधान पर्यन्त
(पु० २ ख० २) में कहे अनुसार फिर (अचास्तोम०) पर्यन्त आचारहो-
मादि । फिर हस्तग्रहणान्त करके अश्मारास्थापन लाजाहोमादिकरे) फिर
पूजा और वरुण का ऊपर अर्यमाके स्थान में करके (पूषणनुदेवं कन्या०) इ-
त्यादि मन्त्रों से दो बार लाजा होम परिक्रमा और अश्मारोहणावरोहण फिर
करें ॥ १३ ॥ (येन द्यौरुग्रा०) इत्यादि होम विवाह में करे तथा (आकूताय०)
इत्यादि पूर्वोक्त जयाहोम (प्राचीदिग्व०) इत्यादि अभ्यातान (प्राणादपानं०)
इत्यादि संतति होम और (ऋताषाड्०) इत्यादि बारह आहुति राष्ट्रभूत होम
भी विवाह में करे ॥ १४ । १५ ॥ (त्रातारमिन्द्रं०) (विश्वदित्या०) इन दो
मन्त्रों से मंगल आहुति करे ॥१६॥ फिर (अर्यमणानु०) इत्यादि पूर्वोक्त मन्त्रों
में अर्यमाके स्थान में काम शब्द का ऊपर करके कि (कामनुदेवं०) चौथी स्वि-
ष्टकृत स्थानी लाजाहुति करे ॥ १७ ॥ फिर इस कन्या को (एकमिषे०) इत्यादि
को आगे (भवसुमृडीका०) से (सुन्नयतु) पर्यन्त मंत्र सब में लगा २ के एक २
मन्त्र से एक २ पग पूर्व को चलावे ॥ १८ ॥ तदनन्तर अग्नि से पश्चिम में लाल
वैल के चर्म को पूर्व की शिर तथा ऊपर की लोम करके बिछावे उस पर दाम

वधूसुपवेशयत्यपि वा दर्शेष्वेव ॥१९॥ इमं विष्यामि वरुणस्य-
पाशं यज्जग्रन्थसवित्तासत्यधर्मा । धातुश्च योनौ सुकृतस्य-
लोकेऽरिष्टां मासहपत्यादधातु ॥ इति योक्त्रपाशं विधाय वा-
ससोऽन्ते वध्नाति ॥२०॥ अनुमतिभ्यां व्याहृतिभिश्च । त्वं नो
अग्ने । सत्वं नो अग्ने । अयाश्चाग्नेऽपीति च ॥२१॥ शमीमयी स्ति-
सोऽक्ताः समिधः । समुद्रादूर्निरित्येताभिस्ति सृभिः स्वाहा-
कारान्ताभिरादधाति ॥२२॥ अक्षतसक्तूनां दध्नश्च समवदा-
येदं हविः प्रजननं मइति च हुत्वा । वितेमुञ्चामिरशनां विर-
श्मीनिति च हुत्वा पवित्रेऽनुग्रहत्याऽऽज्यं नाभिजुहोति ॥२३॥
एधोऽस्य धिषीमहीति समिधमादधाति । समिदसि स मे-
धिषीमहीति द्वितीयाम् ॥२४॥ अपो अद्यान्वचारिणमित्युप-
तिष्ठते ॥२५॥ कुम्भादुदकेनापो हि ष्ठीयाभिर्माज्यन्ते ॥२६॥

विद्याके वधू को बैठाने अपवा केवल दामों पर बैठाने ॥१९॥ फिर (इमं विष्यामि०)
इस मन्त्र को पढ़ के कन्या के कटिभाग में बांधी हुई दाम की रस्सी को खोल
कर ओढ़े हुए वस्त्र के छोर में बांध देवे ॥२०॥ फिर (अनुमति०) के लिये दो,
तीन व्याहृति और (त्वं नो अग्ने०) इत्यादि तीन आहुति देवे ॥२१॥ तदनन्तर शमी
(कोंकर) वृक्ष की तीन समिधा घी में डुबो के (समुद्रादूर्) इत्यादि स्वाहा-
कारान्त तीन मन्त्रों से अग्नि में चढ़ावे ॥ २२ ॥ पश्चात् बिना कूटे जी के स-
क्तू और दही में से दो २ आहुत्यंश अवदान लेकर (इदं हविः प्र०) मन्त्र से
होम करके पवित्रों में घी लगा के पवित्रों का होम करदे और (वितेमुञ्चा-
मि०) इत्यादि मन्त्रों से घी की आहुति करे ॥ २३ ॥ पश्चात् (एधोऽसि०)
मन्त्र से एक औ (समिदसि०) मन्त्र से दूसरी समिधा अग्नि में चढ़ावे ॥२४॥ फिर
(अपो अद्यान्व०) मन्त्र से अग्नि का उपस्थान करे ॥२५॥ फिर कुम्भ जल भरा
कलश धारण करने वाले के कलश से दाम वा आम के पत्तों द्वारा जल ले २

वरे दक्षिणा ॥२॥ इत्येकादशः खण्डः समाप्तः ॥

सुमङ्गलीरियंवधूरिमांसमेतपश्यत । सौभाग्यमस्यैदत्वा
याथास्तांविपरेतन ॥ इति प्रेक्षकान् ब्रजतोऽनुमन्त्रयते ॥१॥
अत्रैव सीमन्तं करोति । त्रिश्येतया शल्लया समूलेन वा
दर्भेण । सेनाहनामेत्येतया ॥२॥ अथाभ्यञ्जन्ति । अभ्यञ्ज-
केशान्सुमनस्यमानाः प्रजावरीर्यशसेवहुपुत्राअघोराः । शिवा
भर्तुःश्वशुरस्यावदायायुष्मतीःश्वश्रुमतीश्चिरायुः ॥ इति ॥३॥
जीवोर्णायोपसमस्यति । समस्यकेशानवुजिनानघोरान् शि-
वासखीभ्योभवसर्वाभ्यः । शिवाभवसुकुलोहमाना शिवाज-
नेपुसहवाहनेषु ॥ इति ॥ ४ ॥ अथैनौ दधिमधु समश्नुतो
यद्वा हविष्यं स्यात् ॥ ५ ॥ तस्य स्वस्तिवाचयित्वा, समा-
नावाआकूतानीति सह जपन्ति ॥ ६ ॥

कर (आपोहिष्ठा०) आदि तीन मन्त्रों से पत्नी का अभिषेक करे ॥२॥ और
श्रेष्ठ गौ आचार्य की दक्षिणा में देवे ॥२॥ यह ग्यारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—जो लोग विवाह देखने को आये हों फिर लौट कर अपने घर
को जाते हों उन को देखता हुआ (सुमङ्गलीरियं०) मन्त्र पढ़े ॥१॥ इसी अव-
सर में घर अपनी पत्नी का सीमन्तोन्नयनकरे अर्थात् निम्न रीति से सांग
भरे । तीन जगह श्वेत सेही के कांटे से अथवा जड़ सहित सखाड़े दाम के गु-
च्छे से (सेनाहनाम०) इस ऋचाको पढ़के सांग के केश दोनों ओर को करे ॥२॥
पश्चात् (अभ्यञ्ज्य केशान्०) मन्त्र पढ़ के वालों में तेल लगावे और कंकत
(ककवा) से काढ़े ॥ ३ ॥ फिर जीते हुये सेड़ा की जून से बनाये होरे के साथ
वालों को (समस्यकेशान्०) मन्त्र पढ़ के गूथे अर्थात् तेनी बना के बांध देवे
॥ ४ ॥ अनन्तर दोनों पति पत्नी दही और शहद मिला कर एक साथ खावे
अथवा हविष्यान्न खावे ॥ ५ ॥ खाने से पहिले पुरोहितादि से कहे (स्वस्ति-
ब्रूहि) तब ब्राह्मण मन्त्र सहित स्वस्ति कहे फिर ब्राह्मण सहित तीनों (स-
मानावा०) मन्त्र को साथ ही पढ़ें ॥ ६ ॥

उभौ सह प्राशनीतः ॥ ७ ॥ इति द्वादशः खण्डः ॥
 पुण्याहे युङ्क्ते ॥ १ ॥ युञ्जन्तिब्रध्नमितिद्वाभ्यां युज्यमा-
 नमनुमन्त्रयते दक्षिणमथोत्तरम् ॥ २ ॥ अहतेन वाससा द-
 र्भैर्वा रथं संमार्ष्टि ॥ ३ ॥ अङ्कन्यङ्कावभितोरथंयेध्वान्ता
 वाताअग्निर्माभयेसंचरन्ति । द्वीरेहेतिःपतत्रीवाजिनीवांस्ते-
 नोऽग्नयःपप्रयःपालयन्तु ॥ इति चक्रेऽभिमन्त्रयते ॥४॥ व-
 नस्पतेवीडवूङ्गइत्यधिष्ठानम् ॥५॥ सुकिंशुकंशलमलिविश्व-
 रूपं हिरण्यवर्णंसुवृतंसुचक्रम् । आरोहसूर्यंअमृतस्यलोकं
 स्योनंपत्येवहतुंक्षुण्णव ॥ इत्यारोहयति ॥ ६ ॥ अनुमायन्तु-
 देवता अनुब्रह्मसुवीर्यम् । अनुक्षत्रंतुयद्वलमनुमामैतुयद्यशः ॥
 इति प्राडभिप्रयाय प्रदक्षिणमावतंतयति ॥७॥ प्रतिमायन्तु-
 देवताः प्रतिब्रह्मसुवीर्यम् । प्रतिक्षत्रंतुयद्वलं प्रतिमामैतुय-

फिर पति पत्नी दोनों दही सहित मिला के वा इविध्यान् को साथ २
 खावें ॥७॥ यह बारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब शुभ नक्षत्र और शुभ ग्रह युक्त पुण्य दिन अपने घर पत्नी को ले
 जाने के लिये रथादि को जोड़े ॥ १ ॥ जब कोई अध्वर्यु आदि रथ में छोड़े
 या बैलों को जोड़ता हो तब उस की ओर देखता हुआ घर (युञ्जन्तिब्र०)
 मन्त्र पढ़े पहिले दहिने को जोड़ते समय फिर बायें को जोड़ते समय पृथक् २
 दो बार मन्त्र पढ़े ॥ २ ॥ तदनन्तर चीरे दार नये वस्त्र से वा दामों से रथा-
 दि सवारी को दोवार फाड़े ॥ ३ ॥ परचास (अङ्कन्यङ्काव०) मन्त्र पढ़के
 रथ के पहियों का अभिमन्त्रण करे प्रथम दहिने का फिर बायें का ॥ ४ ॥
 (वनस्पते०) मन्त्र पढ़ कर रथ पर बैठने के स्थान का अभिमन्त्रण करे ॥५॥
 फिर (सुकिंशुकं०) मन्त्र पढ़ के पत्नी को अध्वर्यु आदि के द्वारा रथ पर
 चढ़ावे ॥ ६ ॥ फिर स्वयं रथ पर बैठ के (अनुमायन्तु०) मन्त्र पढ़ के पहिले
 थोड़ा पूर्व को रथ चला कर प्रदक्षिण क्रम से जाने के मार्ग पर फेर कर लावे ॥७॥
 ठीक घर की जाने वाली रास्ते पर रथ चलता हो तब रथ को देखता हुआ

द्यशः ॥ इति यथास्तं यन्तमनुमन्त्रयते ॥ ८ ॥ अमङ्गल्यं
चेदतिक्रामति । अनुमायन्त्विति जपति ॥ ९ ॥ नमोरुद्रा-
यग्रामसदइति ग्रामे । इमारुद्रायेति च ॥ १० ॥ नमोरुद्रायै-
कवृक्षसदइत्येकवृक्षे । ये वृक्षेषु शष्पिज्जराइति च ॥ ११ ॥ न-
मोरुद्राय श्मशानसदइति श्मशाने । येभूतानामधिपतयइ-
ति च ॥ १२ ॥ नमोरुद्राय चतुष्पथसदइति चतुष्पथे । ये-
पथांपथिरक्षयइति च ॥ १३ ॥ नमोरुद्राय तीर्थसदइति ती-
र्थे । येतीर्थानि प्रचरन्तीति च ॥ १४ ॥ यत्रापस्तरितव्या आ-
सीदति । समुद्रायवैणवेसिन्धूनांपतयेनमः । नमोनदीनां-
सर्वासांपत्ये । विश्वाहाजुपतांविश्वकर्मणामिदंहविः स्वः
स्वाहेत्यप्सूदकाञ्जुलीन्नयति ॥ अमृतं वा आस्ये जुहो
म्यायुः प्राणेऽप्यमृतं ब्रह्मणा सहमृत्युंतरात् । प्रासहादिति
रिष्टिरिति मुक्तिरिति मक्षीयमाणः सर्वभयं नुदस्वस्वाहेति

(प्रतिमायन्तु देव०) मन्त्र को पढ़े ॥ ८ ॥ यदि मार्ग में कहीं श्मशान, कूड़ा
आदि का ढेर और अग्निष्ट घृणित अमंगल वस्तु के समीप हो के निकलने
पड़े तो (अनुमायन्तु०) इत्यादि मन्त्र का जप करे ॥ ९ ॥ यदि ग्राम में हो
कर निकले तो (नमोरुद्राय ग्राम०) तथा (इमारुद्राय०) इन दो मन्त्रों
का जप करे ॥ १० ॥ मार्ग में एक वृक्ष पड़े तो (नमो रुद्रायैकवृक्षसद०)
और (ये वृक्षेषु०) दो मन्त्रों को जपे ॥ ११ ॥ यदि मार्ग में श्मशान (मर-
घट) पड़े तो (नमो रुद्राय०) ये भूताना० दो मन्त्रों को जपे ॥ १२ ॥ यदि चौ-
राहा पड़े तो (नमो रुद्राय०) ये पथां० इन दो मन्त्रों को जपे ॥ १३ ॥
यदि मार्ग में कोई घाट पड़े तो (नमो रुद्राय०) ये तीर्थानि० दो मन्त्रों
को जपे ॥ १४ ॥ यदि नदी आदि पार उतरने योग्य जलाशय आवे तो
अंजुली से जल भरकर (समुद्राय वै०) मन्त्र पढ़ के जलाशय में अंजुली
के जल का होम कर देवे । फिर तीन बार अपने शिर आदि अङ्गों

त्रिः परिमृज्याचामति ॥ १५ ॥ यदि नावा तरेत्सुत्रामा-
णमिति जपेत् ॥ १६ ॥ यदि रथाक्षः शम्भ्याणी वा रिष्येता-
न्यद्वा रथाङ्गं तत्रैवाग्निमुपसमाधाय जयप्रभृतिभिर्हुत्वा
सुमङ्गलीरियं वधूरिति जपेत् । वध्वा सह । वधूं समेत पश्यत
॥ १७ ॥ व्युत्क्राम पन्थां जरितां जवेन । शिवेन वैश्वानरङ्ग-
डयास्याग्रतः । आचार्योऽयेन येन प्रयातितेन तेन सह ॥ इत्युभावे-
व व्युत्क्रामतः ॥ १८ ॥ गोभिः सहास्तमिते ग्रामं प्रविशन्ति
ब्राह्मणवचनाद्वा ॥ १९ ॥ इति त्रयोदशः खण्डः समाप्तः ॥

अपरस्मिन्नहः सन्धौ गृहान्प्रपादयीत ॥ १ ॥ प्रति ब्रह्म-

पर जल से मार्जन करके (असृतं वा आस्ये०) मन्त्र पढ़के तीन बार आचमन
करे ॥ १५ ॥ यदि नौका पर चढ़ के पार उतरना हो तो नौका पर चढ़ा हुआ
(सुत्रामाणं०) मन्त्र का जप करे ॥ १६ ॥ यदि मार्ग में चलते २ रथ की धुरी
सैल वा आरा आदि कोई रथ का अंग टूट फूट जावे तो (उस को बड़ई से
बनवाना यह भिन्न लौकिक काम है उस को तो सभी के तुल्य करे) पर वि-
वाह के वेदि का अग्नि साध (लाना चाहिये) लाया हो उस की प्रज्वलित
कर आधार आष्यभाग के पश्चात् जयादि होम करके (सुमङ्गलीरि०) मन्त्र
को पत्नी सहित पढ़े (इमां समेत) के स्थान में (वधूं समेत) कहे ॥ १७ ॥ फिर
स्त्री पुरुष दोनों (व्युत्क्रामपन्थां०) मन्त्र को पढ़ के रथ से उतरें और पृ-
थक् २ चलें और फिर बैठ जावें ॥ १८ ॥ सूर्यनारायण के अस्त होने पर जंगल से
गौश्रो के घर आने के साथ विदा कराके लाये घराती लोग गांव में घुसं ।
यदि दिन वा अधिक रात जाने का समय हो तो ब्राह्मण की आज्ञा लेकर गांव
में घुसं ॥ १९ ॥ यह तेरहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब वधूके गृहप्रवेशकी रीति दिखातेहैं। ठीक सन्ध्या के समय रथसे उतारके
वधूको घरमें लावें (प्रति ब्रह्मन्०) मन्त्रको पढ़के यज्ञमान वधूको रथसे उतारे ॥ २ ॥ उस
समय दही चन्दादि मंगल वस्तु कोई घरमें से लावे और मंगल सूचक मन्त्रादि का

न्निति प्रत्यवरोहति ॥ २ ॥ मङ्गलानि प्रादुर्भवन्ति ॥ ३ ॥
 गोष्ठात्संततामुलपराजिं स्तृणाति ॥ ४ ॥ रथादध्योपासनात् ।
 येष्वध्येतिप्रवसन्त्येषुसौमनसंमहत् । तेनोपह्वयामहे तेनोजान
 न्त्वागतम् ॥ इति तयाभ्युपैति ॥ ५ ॥ गृहानहंसुमनसः प्रप-
 द्ये वीरंहिवीरवतः सुशेवा । इरांवहन्तीघृतमुक्षमाणास्तेष्वहं-
 सुमनाः संवसाम ॥ इत्यभ्याहिताग्निं सोदकं सौषधमावस-
 थं प्रपद्यते । रोहिण्या मूलेन वा यद्वा पुण्योक्तम् ॥ ६ ॥ प-
 श्चादग्नेरोहिते चर्मण्यानडुहे प्राग्ग्रीवे लोमतो दर्भानास्तीर्य
 तेषु वधूमुपवेशयत्यपिवा दर्भेष्वेव ॥ ७ ॥ अथास्यै ब्रह्म-
 चारिणमुपस्थ आवेशयति । सोमेनादित्या बलिनः सोमेन
 पृथिवी मही । असौ नक्षत्राणामेषामुपस्थे सोमआहितः ॥
 इति ॥ ८ ॥ अथास्य तिलतण्डुलानां फलमिश्राणामञ्जलिं पूर-

उच्चारण घर में हो ॥ ३ ॥ रथ से लेकर घरके भीतर तक पूर्व को अग्रभाग कर
 २ बराबर निरन्तर कुश विद्यावे ॥ ४ ॥ और अध्वर्यु (येष्वध्येति प्र०) मन्त्र
 को पढ़ता हुआ उन विद्याये कुशों पर बहू को घर में ले चले ॥ ५ ॥ फिर (गृ-
 हानहं सुमनसः०) मन्त्र को पढ़ते हुए एक जल भरा पात्र धान की खीले
 आदि और विवाह के अग्नि को साथ लिये हुए घर में प्रवेश करें । प्रवेशके
 समय रोहिणी वा मूल नक्षत्र हो अथवा ज्योतिःशास्त्रानुकूल सुहर्त हो ॥ ६ ॥
 पहिले से वनाये जुए में अग्नि का स्थापन करके उस अग्नि से पश्चिम में
 लाल बैल का चर्म पूर्व की शिर और ऊपर की लोम रख कर विद्यावे उस पर
 दाभ विद्या के उन पर वा बैल का चर्म न मिले तो विद्याये हुए केवल दाभों
 पर बहू को बैठावे ॥ ७ ॥ फिर (सोमेनादित्या०) मन्त्र पढ़ के सृगचर्मादि धारण
 किये किसी ब्रह्मचारी को इस बहू की गोदी में बैठावे ॥ ८ ॥ तब कोई फल
 जिन में मिले हों ऐसे तिल-और चावलों से ब्रह्मचारी की अंजुली भर कर
 बहू की गोदी से चठा देवे । इस के अनन्तर प्रुव, अहन्त्यती जीवन्ती और

यित्वोत्थाप्य । अथास्यै ध्रुवमरुन्धतीं जीवन्तीं सप्तऋ-
षीनिति दर्शयेत् ॥९॥ अच्युताध्रुवाध्रुवपत्नी ध्रुवं पश्येत्
सर्वतः ॥ ध्रुवासःपर्वताइमे ध्रुवास्त्रीपतिकुलेयम् ॥ इति तस्यां
समीक्षमाणायां जपति ॥ १० ॥ श्वोभूते प्राजापत्यं पयसि
स्थालीपाकं प्रपयित्वा तस्य जुहोति (आज्यशेषे) ॥११॥ च-
क्रीवानदुहौवामे वाङ्मैतुतेमनः । चाक्रवाकं संवननं तद्वी सं-
वननं कृतम् ॥ इति यजमानस्त्रिः प्राश्नाति । अवशिष्टं तूष्णीं-
पत्नी ॥१२॥ अपराह्णे पिण्डपितृयज्ञः । स व्याख्यातः ॥१३॥ सं-
वत्सरं ब्रह्मचर्यं चरतो द्वादशरात्रं [त्रिरात्रमेकरात्रं] वा ॥१४॥
अथास्यै गृहान् विसृजेत् ॥१५॥ योक्त्रपाशं विषाय तौ संनि-
पातयेत् ॥ अपश्यन्त्वा तपसा चेकितानं तपसो जातं तपसो वि-
भूतम् । इह प्रजामिहरयि रराणः प्रजायस्व प्रजया पुत्रकाम ॥

सप्तऋषि दिन नक्षत्रों को बहू को दिखावे सप्तऋषियों के बीचकी तारा जीवन्ती
कहाती है ॥९॥ वह बहू जब ध्रुवादि को देखती हो तब वर (अच्युताध्रुवा०)
इत्यादि मन्त्र का जप करे ॥१०॥ फिर अगले दिन प्रातःकाल प्रजापति देवता
के लिये दूध में [पु० २ खं० २ सू० ३०] में कहे अनुसार स्थालीपाक पका के उससे (प्र-
जापतयेत्यादि) मन्त्र द्वारा प्रजापति के लिये तूष्णीं प्रधान होन करे ॥११॥ फिर
शेष बचे घी में दही मिलाकर इस दही के साथ शेष बचे स्थालीपाक को (चक्री-
वानदुहौ०) मन्त्र पढ़ के यजनान तीन बार खावे और शेष बचे को पत्नी वित
मन्त्र तीनवार खावे ॥१२॥ फिर उसी दिन दोपहर बाद मानव कल्पसत्र १।१।२ में
लिखे अनुसार पिण्ड पितृयज्ञ करे ॥१३॥ विवाह विधि हो जाने पर स्त्री पुत्र्य
दोनों एक वर्ष, बारह दिन, तीन दिन, या एक दिन कम से कम ब्रह्मचारी रहे
अर्थात् मैथुन न करें खार लवण छोड़ के हविष्यान्न खावे पृथक् २ पृथिवी पर
सोवे ॥१४॥ इसी अवसर में घर के काम काज घन के लोन देन आदिका अधिकार
पत्नी को देवे ॥१५॥ ब्रह्मचर्यकी समाप्ति में [पु० १ खं० १ सू० ६] से पत्नी के कटि में
बांधी भेखला को खोलकर [यह ब्रह्मचारिणी रहने का चिह्न था इस को नि-

अपश्यंत्वामनसादीध्यानां स्वायांतनूऋत्विगेबाधमानाम् ।
 उपमानुच्चायुवतिर्वभूयाः प्रजायस्व प्रजया पुत्रकामे ॥ प्रजा-
 पतिस्तन्वंमेजुषस्व त्वष्टादेवैः सहमान इन्द्रः । विश्वैर्देवैर्ऋ-
 तुभिः संविदानः पुंसां बहूनां मातरौ स्याव ॥ अहंगर्भमदधामो-
 षधीष्वहं विश्वेषु भुवनेष्वन्तः । अहं प्रजा अजनयं पृथिव्या अ
 हं जनिभ्योऽअपरीषु पुत्रान् ॥ इति स्त्र्यादिव्यत्यासं जपति ॥ १६ ॥
 करदिति भसदमिमृशति ॥ १७ ॥ जननीत्युपजननम् ॥ १८ ॥
 बृहदिति जातं प्रतिष्ठितम् ॥ १९ ॥ एतेन धर्मेण ऋतावृ-
 तौ संनिपातयेत् ॥ २० ॥ इति चतुर्दशः खण्डः समाप्तः ॥

तृतीये गर्भमासे अरणी आहृत्य षष्ठेऽष्टमे वा । जयप्रभृति-
 मिर्हुत्वा पश्चाद्गर्भेर्भवासीनायाः (पत्न्याः) सर्वानप्र-
 मुच्य केशान्नवनीतेनाभ्यज्य त्रिश्येतया शलल्या शमीशा-

काल के] निम्नरीति से दोनों समागम करें समागम से पहिले (अपश्यंत्वात्प०)
 मन्त्र को पति को देखती हुई पत्नी पढ़े फिर (अपश्यंत्वामनसा०) मन्त्र को प-
 त्री की ओर देखता हुआ पति पढ़े फिर (प्रजापतिस्तन्वं०) मन्त्र को पत्नी पढ़े
 और (अहंगर्भमद०) मन्त्र को पति पढ़े ॥ १६ ॥ फिर (करत्) ऐसा कह कर पुरुष प-
 त्री के उपस्थेन्द्रिय का स्पर्श करे (जननी) ऐसा कह कर अपने उपस्थेन्द्रिय का
 स्पर्श करे (बृहत्) ऐसा कह कर दोनों के संयोगान्त में गर्भाशय का स्पर्श करे ॥ १७ ॥ १८ ।
 १९ ॥ इसी रीति से प्रत्येक ऋतुकाल में दोनों समागम किया करें ॥ २० ॥ यह चौद-
 वां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—गर्भ स्थिति से तीसरे छठे वा आठ वें महीने में अरणी द्वारा
 अग्निजन्मन कर स्थापन करके आधारावयवभागों के वाद (१ । ११ । २१)
 में कहा अनुमतिव्याहृति आदि पवित्र होमान्त करके (२ । १० । ८) के अ-
 नुसार अग्नि का प्रधान होम कर के जयाहोमादि करे अग्नि से पश्चिम में
 बिछाये दामों पर बैठी पत्नी के शिर के सब केश खोलकर उन में मक्खन ल-

खया च सपलाशया पुनः पत्नीमग्निरदादिति सीमन्तं करोति ॥ १ ॥ इति पञ्चदशः खण्डः ॥

अष्टमे गर्भमासे जयप्रभृतिभिर्हुत्वा, फलैः स्नापयित्वा, या ओषधय इत्यनुवाकेनाहतेन वाससा प्रच्छाद्य गन्धपुष्पैरलङ्कृत्य फलानि कण्ठे वै संसृज्याऽग्निं प्रदक्षिणं कुर्यात् ॥ १ ॥ प्रजां मे नर्य पाहोति मन्त्रेणोपस्थानं कृत्वा गुणवतो ब्राह्मणान्भोजयेत् ॥ २ ॥ फलानि दक्षिणां दद्यात् ॥ ३ ॥ ततः स्वस्त्ययनं च ॥ ४ ॥ यो गुरुस्तमहंयेत् ॥ ५ ॥ इति षोडशः खण्डः ॥

पुत्रे जाते वरं ददाति ॥ १ ॥ अरणिभ्यामग्निं मथित्वा तस्मिन्नायुष्यहोमाञ्जुहोति ॥ २ ॥ अग्नेरायसीत्यनुवाकेन

गाकर तीन जगह श्वेत सेही के कांटे को और पत्तों सहित शमी (छयोंकर) की डाली को एकत्र कर उससे (पुनः पत्नीमग्निः) इत्यादि मन्त्र पढ़ सांग करे और पूर्ववत् वेनी बांधे ॥ १ ॥ यह पन्द्रहवां खण्ड समाप्त हुआ ।

गर्भ अठवें सहिने का ही तब आचारादि सामान्य होमसहित जयाभ्यासानादि होम करके सब ओषधि फलादि से मिश्रित जलसे गर्भिणी को स्नान कराके (याओषधयः) इस अनुवाक को पढ़ के चारोंद्वार नयी साड़ी उड़ा के झगन्धित केशरादि पुष्पमाला और मग्निरत्न दुवर्णादि के आभूषणों से सुशोभित करे और फलों की माला बना के कण्ठ में पहनाके अग्नि की प्रदक्षिणा करावे ॥ १ ॥ (प्रजां मे नर्य) मन्त्र से अग्नि का उपस्थान करके सदाचारी विद्वान् तीन आदि ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ २ ॥ दक्षिणा में फल देवे ॥ ३ ॥ पश्चात् स्वस्तिवाचन करावे ॥ ४ ॥ पुत्रोत्पन्न होने पर अपने गुरु का पूजन करे ॥ ५ ॥ यह सोलहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—यदि पुत्र उत्पन्न हो तो उक्त अपने गुरु को धन दक्षिणा देवे ॥ १ ॥ अरणि के द्वारा अग्निमन्यन करके उस अग्नि में आयुष्य होम की (अग्नेरायुः) इत्यादि २१ प्रधान आहुति घी से करे । इस से पूर्व आचारादि तथा पीछे अनुमति आदि की आहुति देवे ॥ २ । ३ ॥ पवित्रादि होम के अ-

प्रत्यृचं प्रतिपर्यायमेकविंशतिमाज्याहुतीर्जुहोति ॥ ३ ॥ आ-
 उयशेषे दधिमध्वपो हिरण्यशकलेनोपहृत्य त्रिःप्राशापयति
 ॥ ४ ॥ अश्माभव, परशुभव, हिरण्यमस्वतंभव । वेदोवैपुत्र-
 नामासि, सजीवशरदः शतम् ॥ इति प्रादेशेनाध्यधि प्रति-
 मुखं प्रदक्षिणं सर्वतोऽभ्युद्दिशति ॥ ५ ॥ पलाशस्य मध्यम-
 पर्णं प्रवेष्ट्य तेनास्य कर्णयोज्यते । भूस्ते ददामीति दक्षिणे ।
 भुवस्ते ददामीति सव्ये । स्वस्ते ददामीति दक्षिणे । भूर्भुवः
 स्वस्ते ददामीति सव्ये ॥ ६ ॥ इषं पिब्वोजं पिब्वेति स्तनौ
 प्रक्षाल्य प्रधापयेत् ॥ ७ ॥ इति सप्तदशः खण्डः ॥

दशम्यां रात्र्यां पुत्रस्य नाम दध्यात् । घोषवदाद्यन्त-
 रन्तस्थं द्व्यक्षरं चतुरक्षरं वा । त्र्यक्षरं दान्तं कुमारीणाम् ॥ १ ॥

न्त में शेष बचे ची में दही गहड़ और जल को सुवर्ण के टुकड़े से मिला के अ-
 नासिका अंगुली से तीन बार बच्चे को चटावे ॥ ४ ॥ (अश्मा भव०) इत्या-
 दि मन्त्र के पांच भागों की पढ़ता हुआ मुख की ओर मुख के समीप २ प्रद-
 क्षिणाक्रम से प्रादेश द्वारा संकेत करे ॥ ५ ॥ दांक के पत्तों में से बीच के पत्ते
 को लपेटकर उस का एक छोर बच्चे के कान में एक अपने मुख में लगा के
 निम्न मन्त्र पढ़े (भूस्ते द०) दहिने (भुवस्ते०) बायें में (स्वस्ते०) दहिने
 में फिर (भूर्भुवः स्वस्ते०) बायें कान में लपेटे ॥ ६ ॥ फिर (इषं पिब्वोजं) मन्त्र
 पढ़ के पत्ती के दोनों स्तनों (कुचों) को धोकर बच्चे को पिलावे ॥ ७ ॥ यह
 सत्रहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—जात कर्म से लेकर दशवें दिन पुत्र का नाम धरे । कोई आ-
 चार्य दशमी रात्री व्यतीत होने पर ग्यारहवें दिन नाम रखना जानते हैं । व-
 र्गों के तीसरे चौथे घोषवत् अक्षर जिस के आदि में यरलव अन्तरस्य अक्षर जिस
 के बीच में हों ऐसे दो वा चार अक्षर का नाम पुत्र का और तीन अक्षर का
 दकारान्त नाम कन्याओं का रखे ॥ १ ॥ उसी नाम से अभिवादन गुरु आदि

तेनाभिवादयितुं, त्यक्त्वा पितुर्नामधेयं, यशस्य' नामधेयं
 देवताश्रयं नक्षत्राश्रयं, देवतायाश्च प्रत्यक्षं प्रतिपिदुम् ॥२॥
 स्नात्वा सहपुत्रोऽभ्युपैति ॥३॥ अथैनमभिमृशात्-अग्नेष्ट्वा
 तेजसासूर्यस्यवर्चसा विश्वेपांत्वादेवानां क्रतुनाभिमृशामोति
 प्रक्षालितपाणिर्नवनीतेनाभ्यज्याग्नौ प्रताप्य, ब्राह्मणाय प्रो
 च्याभिमृशेदिति श्रुतिः ॥ ४ ॥ वरं कर्त्रे ददाति ॥ ५ ॥ अ-
 ङ्गादङ्गात्सम्भवसि हृदयादधिजायसे । आ मावैपुत्रनामासि
 सजीवशरदःशतम् ॥ इति प्रवासादेत्य पुत्रस्य मूढं नि जपेत्
 ॥ ६ ॥ न मधुमांसे प्राप्नीयादापशुवन्धात् ॥ ७ ॥ संवत्सरे
 चाजाविभ्यामग्निधन्वन्तरी यजेत् ॥८॥ इत्यष्टादशः खण्डः ॥
 अथाद्विधदर्शनम् ॥ १ ॥ चतुर्थे मासि पयसि स्थाली

को किया करे । पुत्र के नाम के साथ ही पीछे पिता का भी नाम लगाया
 जाय पर अभिवादन में पिता के नाम को छोड़ देवे । जिस तिथि वा नक्षत्र में
 जन्म हो उस के देवता सम्बन्धी वा नक्षत्र सम्बन्धी नाम कीर्ति के लिये अच्छे हैं ।
 परन्तु देवता और पिता का साक्षात् नाम रखना मना है ॥ २ ॥ फिर पुत्र के
 सहित अपने पिता को अभिवादन करके अग्नि के सम्मुख बैठे ॥३॥ फिर धीरे धीरे
 हाथों में नक्खन लगा के अग्नि में तपा के और वरुचे का स्पर्श करने की ब्रा-
 ह्मण से आज्ञा लेकर (अग्नेष्ट्वा०) मन्त्र पढ़के वरुचे का स्पर्श करे ॥४॥ जात-
 कर्मादि कराने वाले आचार्य को दक्षिणा देवे ॥ ५ ॥ जब देशान्तर से आवे तब
 (अङ्गाद०) मन्त्र को पुत्र के शिर में मुख लगा के जपे ॥ ६ ॥ पशुयन्त्र यज्ञ करने
 से पहिले शहद और मांस न खावे (उससे आगे भी खाने का विधि नहीं किन्तु
 पहिले न खाने का निषेध है) ॥ ७ ॥ पुत्र जन्म से लेकर एक वर्ष में बकरी
 और भेड़ के द्वारा अग्नि और धन्वन्तरि देवता का पूजन करे ॥ ८ ॥

यह अठारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब इस उक्तीशर्वे खण्ड में विधि सहित सूर्य का दर्शन करना रूप निष्क-
 मण संस्कार कहते हैं ॥ १॥ बालक चौथे महीने में हो तब दूध में स्थालीपाक

पाकं श्रपयित्वा तस्य जुहोति ॥ २॥ आदित्यः शुक्रउदगा-
त्पुरस्तात्, हंसः शुचिपत्, यदेदेनमिति सूर्यस्य जुहोति ॥३॥
उदुत्यंजातवेदसमित्येतयोपस्थायादित्यस्याभिमुखं दर्शयेत् ।
नमस्ते अस्तुभगवन् शतरश्मे तमोनुद । जहिमेदेवदौर्भाग्यं
सौभाग्येनमांसंयोजयस्व ॥ इति ॥ ४ ॥ अथ ब्राह्मणतर्प-
णम् ॥५॥ ऋषभो दक्षिणा॥६॥ इत्यूनविंशः खण्डः समाप्तः॥
अथान्नप्राशनम् ॥१॥ पञ्चमे षष्ठे वा मासि पयसि
स्थालीपाकं श्रपयित्वा, स्नातमलङ्कृतमहतेन वाससा प्र-
च्छाद्याऽन्नपतेऽन्नस्यनोदेहीति हुत्वा, हिरण्येन प्राशयेद-
न्नात्परिस्तुतइत्यृचा ॥ २ ॥ [रत्नसुवर्णापस्कराण्यायुधानि
दर्शयेत् ॥ ३ ॥ यदिच्छेत्तदुपसंगृहणीयात् ॥ ४ ॥ ततो ब्रा-

वना कर उस का निष्ठा रीति से होन करे ॥२॥ तूष्णीं अग्नि का नश्यन दया-
पन प्रज्वालन करके इसी अग्नि में दूध का स्थालीपाक बनाकर (आदि-
त्यः० । हंसः शुचि० । यदेदेन०) इन तीन स्वाहान्त मन्त्रों से सूर्य देवता का
होन आचारादि के पश्चात् करे ॥ ३ ॥ (उदुत्यं० मन्त्र से सूर्य का उपस्थान
करके (नमस्तेऽस्तु०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के बच्चे को आदित्य की ओर मुख
कर दर्शन करावे ॥ ४ ॥ इस के अनन्तर ब्राह्मण को भोजन करावे ॥ ५ ॥ और
एक बैल दक्षिणा में देवे ॥ ६ ॥ यह उन्नीशवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब इस वीशवें खण्ड में अन्नप्राशन कहते हैं ॥ १ ॥ पांचवें व छठे म-
हिने में दूध में स्थालीपाक बनाके [यदि कष्ट पुष्ट बालक हों तो पांचवें म-
हिने में अन्यथा छठे में करे] सर्वोपधी आदि युक्त जल से बालक को स्नान
कराके और आभूषण पहनाके नया चीरेदार वस्त्र उढ़ा कर आचारादि के प-
श्चात् (अन्नपते०) मन्त्र से प्रधान होय स्थालीपाक से करके (अन्नात्परिस्तुत०)
इस ऋचा को पढ़ कर सुवर्ण से बालक को स्थालीपाक खावावे ॥२॥ [रत्न और सु-
वर्ण जिन में लगा हो ऐसे हथियार बच्चे को दिखावे ॥३॥ जिस आयुध को
आगे धारण कराना चाहता हो उस को बालक से स्पर्श करावे ॥ ४ ॥ इस के

ह्यणभोजनम् ॥५॥ वासो दक्षिणा ॥६॥] इति विंशः खण्डः॥

तृतीयस्य वर्षस्य भूयिष्ठे गते चूडाः कारयेत् । उदग-
यने ज्यौत्स्ने पुण्ये नक्षत्रेऽनयत्र नवम्याः ॥१॥ जयप्रभृति-
भिर्हुत्वा-उष्णेनवायुरुदकेनेद्यजमानस्यायुपा । सविताव-
रुणोदधद्यजमानायदाशुपे ॥इत्युष्णा अपोऽभिमन्त्रयते ॥२॥
अदितिःकेशान्वपत्वापउन्दन्तुजीवसे । धारयतुप्रजापतिः
पुनःपुनःस्वस्तये ॥ इत्यभ्युदन्ति ॥ ३ ॥ ओषधेत्रायस्वैन-
मिति दक्षिणस्मिन्नकेशाः ते दर्भमन्तर्दधाति ॥ ४ ॥ स्वधि-
तेमैनंहिंसीरिति क्षुरेणाभिनिदधाति ॥ ५ ॥ येनावपत्सवि-
ताक्षुरेण सोमस्यराज्ञीवरुणस्यकेशान् । तेनब्राह्मणोवपत्वा
युष्मानयं जरदष्टिरस्तु ॥ येनपूपावृहस्पतेरिन्द्रस्यचायुपे-
ऽवपत् । तेनतेवपाम्यायुषेदीर्घायुत्वायजीवसे । येनभूश्रय-
रत्ययं ज्योक्चपश्यतिसूर्यः । तेनतेवपाम्यायुपे सुश्लीकया
यस्वस्तये ॥ इति तिस्रिभिस्त्रिः प्रवपति ॥ ६ ॥ यत्क्षुरेण

बाद ब्राह्मणों को भोजन कराके दक्षिणा में वस्त्र देवे ॥५॥ ६॥] यह बींशवां
खण्ड पूरा हुआ ॥

अब चूडाकर्मसुगहन संस्कार दिखाते हैं । बालक के आयु का तीसरे वर्ष में
अधिक भाग बीत जाने पर जब उत्तरायण शुक्ल पक्ष हो वा पुण्य नक्षत्र हो
तब नवमी तिथि की छोड़ कर सुंठन करावे ॥ १ ॥ फिर आधाराज्यभागादि
के बाद जयादिहीन करके (उष्णेनवायु०) मन्त्र पढ़ के गुर्म जल का अ-
भिमन्त्रण करे ॥२॥ फिर (अदितिः केशान्०) मन्त्र पढ़ के गर्म जल से बच्चेके
बालों को भिगोवे ॥३॥ (ओषधेत्रा०) मन्त्र पढ़ के शिर के दहिने बालों के
अन्त में बालों के बीच दाम रखे ॥ ४ ॥ (स्वधितेमैनं०) मन्त्र पढ़ के दाम
सहित बालों पर झुरा रखे ॥५॥ फिर (येनावपत्०) इत्यादि तीन मन्त्र पढ़ २
के तीन बार कुश सहित बालों को काटे ॥ ६ ॥ फिर (यत्क्षुरेण०) मन्त्र पढ़ के

वर्त्तयतासुतेजसा वप्तवपसिकेशान् । शुनिधिशिरोमास्यायुः
 प्रमोषीः ॥ इति लौहायसं क्षुरं केशवापाय प्रयच्छति ॥७॥
 मातेकेशाननुगाद्वर्चएतत्तथाधातादधातुते । तुभ्यमिन्द्रोव-
 रुणोवृहस्पतिः सवितावर्चआदधुः ॥ इतिप्रवपतोऽनुमन्त्रयते ॥
 सुहृत्परिग्राहं हरितगोशकृत्पिण्डे समवचिनोति ॥ ९ ॥ उ-
 प्त्वायकेशान्वरुणस्यराज्ञो वृहस्पतिः सविता विष्णुरग्निः ।
 तेभ्यो निधानं महत् न विन्दन्नन्तरा द्यावापृथिव्योरपस्युः
 ॥ इति प्रागुदीचो ह्रियमाणाननुमन्त्रयते ॥ १० ॥ अरित्ते
 पतया श्लेषयेदिति श्रुतिः ॥११॥ वरं कर्त्रे ददाति । पक्ष्मगु-
 ङं तिलपिश्लं च केशवापाय ॥ १२ ॥ एतेन तु कल्पेन षो-
 ढशे वर्षे गोदानम् । अग्निं वाधयेष्यमाणस्याग्निगोदानि-
 को मैत्रायणिरिति श्रुतिः ॥ १३ ॥ अदितिः श्मश्रु वपत्वि-

लोहे के छुरे को हजामत करने वाले नाई को देदेवे ॥७॥ फिर (मातेकेशान्०) मन्त्र पढ़ता हुआ बाल बनाते नाई का अनुमन्त्रण करे (उसकी ओर देखे) ॥८॥ नाई के बनाने से गिरते हुए बालों को छुड़काव से ले २ कर गौ के हरे गोबर के पिण्ड पर धरता जावे ॥ ९ ॥ फिर (उपत्वायकेशान्०) मन्त्र से पूर्व वा उत्तर की गोबरपिण्ड सहित ले जाते हुए केशों का अनुमन्त्रण करे ॥ १० ॥ उस बालों सहित गोबर के पिण्ड की धान्य जिन में भरा हो ऐसे पत्नी के हाथों से स्पर्श करावे ऐसा श्रुति में लिखा है ॥ ११ ॥ कर्म कराने वाले पुरोहित को गौ दक्षिणा में देवे । केशर गुड़ और कुटे हुए तिल नाई को देवे ॥ १२ ॥ इसी रीति से जन्म से सोलहवें वर्ष गोदान नाम केशान्त संस्कार करे अथवा वेदाध्ययन करता हुआ जब आवश्यकताग्नि का स्थापन विधिपूर्वक करे तब पहिले वा पीछे केशान्त संस्कार करे । क्योंकि श्रुति में लिखा है कि (अग्निगोदानिको मैत्रायणिः) अर्थात् महर्षि मैत्रायणि ने अग्निस्थापन के समय गोदान (केशान्त) संस्कार किया था ॥ १३ ॥ इसी तरह में मन्त्रों में आये (केशान्) के स्थान में केशान्त संस्कार में मन्त्र बोलते समय श्मश्रु-

त्यूहेन श्मश्रु प्रवपति शुन्धिमुखमिति च ॥ १४ ॥ इत्येक-
विंशः खण्डः समाप्तः ॥

सप्तमे नवमे वीपायनम् ॥ १ ॥ आगन्त्रासमगन्महि प्र-
थममतिथ्युत्तुनः । अरिष्टाः संचरेमहि स्वस्तिचरतादिशः ।
स्वस्त्यागृहेभ्यः ॥ इत्युप्तकेशेन स्नातेनाक्तेनाभ्यक्ते-
नालङ्कृतेन यज्ञोपवीतिना समेत्य जपति ॥ २ ॥ अथास्मै
वासः प्रयच्छति—या अकृन्तन्या अतन्वन्या आवन्या अ-
वाहरन् । याश्चग्ना देव्योऽन्तानभितोऽततनन्त । तास्त्वा-
देव्योजरसे संव्ययन्त्वा युष्मन्निदं परिधत्स्व वासः ॥ इत्यहत्
वासः परिधाप्यान्वारभ्याघारावाज्यभागौ हुत्वाऽऽज्य-
शेषे दध्यानीय-दधिक्राव्णो अकारिपमिति दधि त्रिः प्रा-
श्नाति ॥ ३ ॥ कोनामासीत्याह ॥ ४ ॥ नामधेये प्रोक्ते-

पद का और शिरः शब्द के स्थान में (मुखम्) का जह करना चाहिये ॥ १४ ॥
पह इक्कीशवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—सातवें वा नवमें वर्ष में ब्राह्मणादि द्विज बालकों का उपनय-
न संस्कार करना चाहिये ॥ १ ॥ प्रथम पितादि घर के लोग बालक का क्षीर
करा के स्नान करावें फिर आंखों में अजून शिर आदि में मन्त्र लगाके
झंगूठी आदि आभूषण तथा बनाया हुआ यज्ञोपवीत पहनावें तब ऐसे वा-
लक के ससीप लाकर आचार्य (आगन्त्रासमग०) मन्त्र का जप करे ॥ २ ॥ फिर
(या अकृन्तन्या०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के चरीदार तथा जख्ख बालक को
(परिधत्स्व०) ऐसा कहके पहनावे । फिर बालक के अन्वारम्भ करने पर
आधार तथा आज्यभाग होम करके होम के शेषघृत में से किंचित् पृथक्
लेकर उस में दही मिलाकर (दधिकाव्णो०) मन्त्र द्वारा तीन बार बालक
को प्राश्न कस्तवे ॥ ३ ॥ फिर आचमन कर लेने पर आचार्य कहे (कोनामासि)
तुम्हारा क्या नाम है ॥ ४ ॥ तब बालक अपना शर्मान्तादि नाम (अमुकशर्मा-

देवस्य त्वासवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यांपूष्णो हस्ताभ्यां हस्तं
 गृह्णाम्यसाविति हस्तं गृह्णन्नाम गृह्णाति । प्राङ्मुखस्य
 प्रत्यङ्मुख ऊर्ध्वस्तिष्ठन्नासीनस्य दक्षिणमुत्तानंदक्षिणेन नी-
 चारिक्तमरिक्तेन-सविता ते हस्तमग्रहीदसावग्निराचार्य-
 स्तवादेव सवितरेष ते ब्रह्मचारी त्वं गोपाय स मावृतत॥ कस्य
 ब्रह्मचार्यसि । प्राणस्य ब्रह्मचार्यसि । कस्त्वा कमुपनयते । का
 य त्वा परिददामि । कस्मै त्वा परिददामि । भगाय त्वा प-
 रिददाम्यर्णम्णे त्वा परिददामि । सवित्रे त्वा परिददामि ।
 सरस्वत्यू त्वा परिददामि । इन्द्राग्निभ्यां त्वा परिददामि ।
 विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः परिददामि । सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः प-
 रिददामीति परिददाति ॥ ५ ॥ ब्रह्मणो ग्रन्थिरसि स ते
 माब्रह्मसदिति हृदयदेशमारभ्य जपति । प्राणानां ग्रन्थि-
 रसीति प्राणदेशम् ॥ ६ ॥ ऋतस्य गोप्त्री तपसस्तस्त्री धनती

हन्तस्मि भोः) कहे तब आचार्य (देवस्यत्वा०) इत्यादि मन्त्र पढ़ता हुआ
 बालक का दहिना हाथ पकड़े और (असी) पद के स्थान में बालक का
 सम्बोधनान्त नाम बोले । सो बालक के हाथ पकड़ने की रीति यह है
 कि शिष्य का मुख पूर्व की आचार्य का पश्चिम की ही शिष्य बैठा हो
 आचार्य खड़ा हो शिष्य का हाथ नीचा और खाली हो ऐसे शिष्य के
 दहिने हाथ की किसी संगल बोधक वस्तु सहित अपने दहिने हाथ से
 आचार्य पकड़े और (सविताते०) इत्यादि मन्त्र पढ़ें (कस्य ब्रह्म०) इत्या-
 दि मन्त्रों में प्रजापति आदि उन २ देवताओं का ध्यान करता हुआ रक्षा के
 लिये ब्रह्मचारी को देवताओं को सौंपे ॥ ५ ॥ अपना दहिना हाथ ब्रह्मचा-
 री के हृदय पर रख के (ब्रह्मणोग्रन्थि०) मन्त्र पढ़े तथा ब्रह्मचारी की ना-
 सिका के छिद्रों का स्पर्श करता हुआ (प्राणानां०) मन्त्र को आचार्य पढ़े
 ॥ ६ ॥ फिर ब्रह्मचारी (ऋतस्यगो०) इत्यादि मन्त्र को पढ़ता हुआ सात

रक्षः सहमाना अरातीः । सा नः समन्तमभिपर्येहि भद्रे ध-
र्त्तारस्ते सुभगे मेखलं मारिषाम् ॥ इति मौञ्जीं पृथिवीं त्रि-
गुणां मेखलामादत्ते ॥ ७ ॥ युवासुवासाइति मेखलां प्रदक्षि-
णं त्रिःपरि-ययति ॥ ८ ॥ पुंसस्त्रीन्ग्रन्थीन्वधनाति ॥ ९ ॥ इयंदुरुक्ता
त्परिबाधमाना वर्णपुराणंपुनतीमअगात् । प्राणापानाभ्यां व-
लमाभजन्ती शिवादेवी सुभगे मेखले मारिषाम् ॥ इति तस्यां परि-
वीतायां जपति ॥ मम व्रते ते हृदयं दधातु मम चित्तमनुचित्तन्ते अ-
स्तु । मम वाचमेकव्रतो जुषस्व बृहस्पतिश्चानियुनस्तु मह्यम्
॥ इति ॥ १० ॥ यज्ञियः यवक्षस्य दण्डं प्रदाय कृष्णाजिनं चादित्य
मुपस्थापयति । अध्वनामध्वपते श्रैष्ठ्यस्य स्वस्त्याध्वनः पार-
मशीय । तच्च अद्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् पश्यंमशरदः शतं
जीवेमशरदः शतम् । शृणुयामशरदः शतं पूत्रवामशरदः शत-
म् । अदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शदात् ॥ यामे-
धाऽप्सरः सुगन्धर्वेषु च यन्मनः । दैवीयामानुषी मेधा सा
मामाविशतादिहैव ॥ इति ॥ ११ ॥ अभिदक्षिणमानीयाऽग्नेः

कौश्यों की तीन लहों वाली सौटी मेखला की हाथ में लेवे ॥ ७ ॥ फिर (यु-
वासु०) मन्त्र पढ़ के उस मेखला को प्रदक्षिणक्रम से तीन बार अपने बाँटि
भाग में लपेटे ॥ ८ ॥ पुरुष की मेखला में तीन गाँठें लगावे वाँगे तीन गाँठें
पुरुष चिह्नवाली हों स्त्रीसम्बन्धी न हों स्त्री की मेखला पूर्व विवाह में क-
ह चुके हैं उस की गाँठ अन्य प्रकार की होगी ॥ ९ ॥ मेखला धारण करतेने पर
ब्रह्मचारी (इयंदुरुक्ता०) मन्त्र पढ़े और (ममव्रते०) मन्त्र को आचार्य
पढ़े ॥ १० ॥ फिर विह्व-बेल, पलाश-ढाँक, आदि यज्ञिय वृक्ष का दण्ड और
कृष्णमृग का चर्म ब्रह्मचारी को दे कर (अध्वनाम०) इत्यादि मन्त्रों को
पढ़ता हुआ आचार्य ब्रह्मचारी से आदित्य देवता का उपस्थान करावे ॥ ११ ॥
अपने से दक्षिण अग्नि से पश्चिम में ब्रह्मचारी को खड़ा कर एक परस्पर की
शिलापर ब्रह्मचारी का दहिना प्रंग घरावे और साथ ही आचार्य (एच्छमानं०)

पश्चात्-एषश्मानमातिष्ठाश्मेव त्वं स्थिरो भव। कृण्वन्तु वि-
श्वदेवा आयुष्टे शरदःशतम् ॥ इति दक्षिणेन पादेनाश्मान-
मास्थापयति ॥ १२ ॥ पश्चादग्नेर्महदुपस्तीर्य सूपस्थलं कृत्वा प्रा-
ङ्हासीनः प्रत्यङ्गहासीनायानुवाचयति गायत्रीं सावित्रीमपि ह्ये-
के त्रिष्टुभमपि ह्येके जगतीमोमित्युक्त्वा व्याहुतिभिश्च
॥ १३ ॥ तां त्रिरवगृह्णीयात्तां द्विरवकृत्य तां सकृत्समस्येत् । पा-
दशोऽर्द्धचशः सर्वामन्तेन ॥ १४ ॥ यत्तिसृणां प्रातरन्वाह यद्-
द्वयोर्गदेकस्याः संवत्सरे द्वादशाहे षडहे त्र्यहे वा तस्मात्सद्यो
ऽनूचयेति श्रुतिः ॥ १५ ॥ वरं कर्त्रे ददाति कांस्यं वसनं च ॥ १६ ॥
यस्य तु मेधाकामः स्यात्पलाशं नवनीतेनाभ्यज्य तस्य छाया
यां वाचयेत्-सुश्रवः सुश्रवा असि । यथा त्वं सुश्रवः सुश्रवा असि

मन्त्र पढ़े ॥ १२ ॥ इस के अनन्तर स्थापित अग्नि से पश्चिम में आचार्य के बैठने
की ऊंची गद्दी लगा के पूर्व की मुख कर उच्चासन पर आचार्य बैठे उन के सा-
मने पश्चिमाभिमुख नीचे आसनपर बैठे ब्रह्मचारी को प्रणव तथा व्याहृतियों
सहित सविता देवता वाली (तत्सुबितु०) इस गायत्री मन्त्र का तीनों वर्णों के
ब्रह्मचारियों को आचार्य उपदेश करे यह किहीं आचार्यों का मत है। और को-
ई कहते हैं कि पूर्व (पु० १ खं० २ सू० ३) के लेखानुसार (आदेवी०) इस त्रिष्टुप् सावि-
त्री का क्षत्रिय को और (युजुते०) जगती सावित्री का वैश्य ब्रह्मचारी को उ-
पदेश करे ॥ १३ ॥ उस गायत्री के तीन भाग कर के उपदेश करे । दो बार खण्ड २
करके तथा एक बार पूरे इकट्ठे मन्त्र का करे । प्रथम बार तीनों पाद पृथक् २
द्वितीय बार (धीमहि) तक एक भाग आगे दूसरा तृतीय बार में सब मन्त्र ए-
क बार में कहनावे ॥ १४ ॥ गायत्री सावित्री के उपदेशार्थ एक, दो, तीन, चार और
बारह रात्री व्यतीत होने पर उपदेश करे इन विकसिप्त पांच पक्षों में जिस दि-
न करे उस दिन प्रातःकाल ही करे परन्तु उपनयन संस्कार के समय संतकाल ही उपदे-
श करना श्रुतिके अनुकूल उत्तम पक्ष है ॥ १५ ॥ उपनयन कराने वाले पुरोहितादि को
धन वा गौ कांसि का पात्र और नया वस्त्र दक्षिण में देवे ॥ १६ ॥ आचार्य जिस ब्र-
ह्मचारी का बुद्धिमान होना चाहता हो उस को मखन जिस में लगाया गया

एवं मां सुश्रवः सौश्रवसं कुरु ॥ यथा त्वं देवानां वेदानानि
धिपो असि । एवमहं मनुष्याणां वेदानां निधिपो भूयासम् ॥ इति
अधीते हवा अयमेपां वेदानामेकं द्वौ त्रीन् सर्वान्वेति यमेव वि
द्वांसमुपनयतीति श्रुतिः ॥ १८ ॥ व्याख्यातं ब्रह्मचर्यम् ॥ १९ ॥ अ-
थ भैक्षं चरते मातरमेवाग्रं याश्चान्याः सुहृदो यावत्यो वा सं-
निहिताः स्युः ॥ २० ॥ आचार्याय भैक्षमुपकल्पयते । तेनानुज्ञातो
भुञ्जीतेति श्रुतिः ॥ २१ ॥ इति द्वाविंशः खण्डः ॥

अथ दीक्षाचातुर्होत्रिकी संवत्सरम् ॥ १ ॥ चतुर्होतृन्स्व-
कर्मणो जुहुयात् । सह षड्ढोत्रा सप्तहोतारम् ॥ २ ॥ अन्ततो

हो ऐसे ढांक वृक्ष की छाया में (सुश्रवः) इत्यादि मन्त्र कहलावे ॥ १७ ॥ श्रुति में
लिखा है कि उपनयन विधि को यथार्थ ठीक जानने वाला आचार्य जिस शि-
ष्य का ठीक २ उपनयन करता है वह एक दो तीन वा सय वेदों को (मनु०
अ० ३।२) अवश्य पढ़ता है ॥ १९ ॥ (पु० १।ख० १।२) में ब्रह्मचर्य का व्याख्यान कर चुके
॥ १९ ॥ अब भिक्षा मांगने का विचार दिखाते हैं । ब्रह्मचारी प्रथम माता से ही
भिक्षा मांगे (मनु० अ० २।५०) माता के अभाव में प्रेम रखने वाली सौखी आदि
जो २ समीप हों उन २ से मांगे ॥ २० ॥ भिक्षा मांग कर प्रथम आचार्य को सं-
नर्पण करे और जब गुप्त आज्ञा देवे तब भोजन करे ॥ २१ ॥

यह बाईशवां खण्ड पूरा हुआ ॥

चातुर्होत्रिकी दीक्षा यह कर्मका नाम है । ब्रह्मचारी के लिये जो नियम इस ग्रन्थ के
आदि में कहे हैं वे अधिकांश दीक्षित के नियमों से मिलते हैं । यद्यपि श्रौतसूत्रों में
दीक्षित के लिये पूरे २ नियम कहे गये हैं तथापि इसी खण्ड के ८ वे सूत्र से
लेके कुछ नियम यहां भी कहे हैं । इस चातुर्होत्रिकी दीक्षा को ब्रह्मचारी एक
वर्ष तक करे ॥ १ ॥ वाचस्पति आदि देवों की चतुर्होतादि संज्ञा हैं । ब्रह्मचा-
री अपना कर्म करता हुआ वाचस्पति आदि चार होताओं के लिये दीक्षा
के दिनों में आहुति दिया करे । और वाक् आदि छः होताओं के साथ सप्त
होतृक होम करे ॥ २ ॥ अन्त में ब्राह्मणादि दीक्षित को हुषादि भोजनार्थ

व्रतं प्रदायादितो द्वावनुवाकावनुवाचयेत् ॥३॥ एवमेवोद्दीक्षां
 जुहुयात् ॥ ४ ॥ अथ दीक्षाग्निकी द्वादशरात्रम् ॥५॥ युञ्जानः
 प्रथममनइत्यष्टौ हुत्वाऽऽकृतमग्निं प्रयुजं स्वाहेति षड्
 जुहोति । विश्वो देवस्य नेतुरिति सप्तमीम् ॥६॥ व्रतं प्रदा-
 यादितोऽष्टावनुवाकाननुवाचयेत् ॥ ७ ॥ त्रिषवणमुदकमा-
 हरेत् त्रींस्तीन्कुम्भान् ॥ ८ ॥ एकेन वाससाऽनन्तर्हितायां
 भूमौ शयीत भस्मनि करीषे सिकतासु वा ॥ ९ ॥ नोदकम-
 भ्यवेयात् ॥ १० ॥ समाप्ते घृतवत्ताऽपूपेनेष्ट्वा वात्समं वाच-
 येत् ॥ ११ ॥ ततो घृतवद्विरूपैर्ब्राह्मणानभोजयेत् ॥ १२ ॥
 एवमेवोद्दीक्षां जुहुयात् ॥ १३ ॥ अथ दीक्षाश्वमेधिकी द्वाद-

नियत वस्तु देशवेद के आरम्भ के दो अनुवाकों का अनुवाचन करावे ॥ ३ ॥
 इसी प्रकार उद्दीक्षा का भी होम करे ॥ ४ ॥ अब आग्निकी दीक्षा का
 व्रत बारह दिन का होता है सो भी दिखाते हैं ॥ ५ ॥ प्रथम आचार
 और आचमणों के पश्चात् (युञ्जानः प्र०) इत्यादि आठ आहुति करके
 (आकृतमग्निं प्र०) इत्यादि छः आहुति करे पीछे (विश्वोदेवस्य०) मन्त्रसे
 सातवीं आहुति करे ॥ ६ ॥ फिर भोजनार्थ दुग्धादि देकर अग्निकायह के आ-
 दि से आठ अनुवाकों का अनुवाचन करावे । ब्रह्मचारी ऐसा नित्य २ बारहों
 दिन करे ॥७॥ और कुछ विशेष नियम ये हैं कि सायं प्रातः और मध्याह्न में
 तीनों समय तीन २ घड़ा भर २ जलाशयसे जल लाया करे ॥८॥ जिस पर कु-
 ल पलाल आदि भी न बिछा हो ऐसी शून्य भूमि पर अथवा नल्ल बिछी हो
 वा कण्डों का चूरा बिछा हो अथवा बालू बिछायी हो उस पर एक वस्त्र केव-
 ला लंगोटी वा धोती पहन कर सोया करे ॥ ९ ॥ दीक्षा के दिनों में जल में
 घुस कर स्नान न करे और अन्य प्रकार से भी स्नान न करे ॥ १० ॥ बारह
 दिन का व्रत समाप्त होने पर सालपुत्रा द्वारा प्रधान देवता अग्नि के स्त्रिये
 होन करके वत्समी देवता वाले अनुवाक का जप करे ॥ ११ ॥ तदन्तर
 सालपुत्रा द्वारा तीन ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १२ ॥ इसी प्रकार उद्दीक्षा
 का भी होमकरे ॥ १३ ॥ अब बारह दिन का आश्वमेधिकी दीक्षा का व्रत

शरात्रम् ॥ १४ ॥ वैतसमिधममुपसमाधाय नवमेनानुवाकेन
 हुत्वा पष्ठेनोपस्थाप्य व्रतं प्रदायादित एकविंशत्यनुवाका-
 ननुवाचयेत् ॥ १५ ॥ त्रिपवणमश्वस्य घासमाहरेत् । त्रींस्त्री-
 न्पूलान् ॥ १६ ॥ एकेन वाससाऽनन्तर्हितायां भूमौ शयीत
 भस्मनि करीषे सिकतासु वा ॥ १७ ॥ या ओपधयः । समन्या
 यन्ति । पुनन्तु मा पितरः । अग्नेर्मन्वइति चतुर्भिरनुवा
 कैरपोऽभिमन्त्र्य स्नानमाचरेत् ॥ १८ ॥ एवमेवोद्दीक्षां जुहु-
 यात् ॥ १९ ॥ शादंदद्विरिति चतुर्दशानुवाकाननुवाचयेत् ॥
 ॥ २० ॥ रहस्यमध्येप्यसाणः प्रवर्ग्यम् ॥ २१ ॥ आदेशे यथा

कहते हैं । जैसे आग्निकी दीक्षा ब्राह्मण ब्रह्मचारी के लिये ही नियत है वैसे ही
 यह आश्वमेधिकी दीक्षा क्षत्रिय ब्रह्मचारी के लिये ही है अन्य के लिये नहीं है
 ॥ १४ ॥ वैतनामक वृत्त की समिधाओं से अग्नि को प्रज्वलित करके नववें अनुवा-
 क से होम और छठे अनुवाक से देवता का उपस्थान करे । तदनन्तर भोजनार्थ
 नियत यवायू दीक्षित को यथायोग्य देकर आदि से इक्षीश अनुवाकों का
 अनुवाचन करे ॥ १५ ॥ सायं प्रातः और मध्याह्न तीनों काल में तीन २ पूजा
 घास छोड़े के लिये लावे । अर्थात् इस आश्वमेधिकी दीक्षा से क्षत्रिय ब्रह्मचा-
 री अच्छे प्रकार देवबुद्धि से छोड़े की सेवा भी अन्य अपने नियम पालने के
 तुल्य किया करे ॥ १६ ॥ जिस पर कुछ न बिछा हो ऐसी खाली भूमि पर वा
 भस्म बिछा कर वाकों का चूरा बिछा के अथवा बालू बिछा के उस पर एक
 घर्तन धारण किये सोया करे ॥ १७ ॥ (या ओपधयः) इत्यादि चार अनुवाकों
 से जल का अभिमन्त्रण कर के नित्य २ स्नान किया करे ॥ १८ ॥ इसी प्रकार
 उद्दीक्षा का भी होम करे ॥ १९ ॥ (शादंदद्विः) इत्यादि चौदह अनुवाकों का
 अनुवाचन करावे ॥ २० ॥ रहस्य नाम वेद के उपनिषद् भाग को पढ़ना चाह-
 ता हो तो मानव और सूत्रादि में लिखे अनुसार ब्रह्मचारी प्रवर्ग्य संभरण क-
 र्म के प्रतिपादक मन्त्र ब्राह्मण का प्रथम अध्ययन करे ॥ २१ ॥ यदि दीक्षा ले

पुरस्ताद् व्याख्यातम् ॥ २२ ॥ आदितः पञ्चविंशत्यनु-
वाकाननुवाचयेत् ॥ २३ ॥ त्रैविद्यक्रममुपनयनेन व्याख्यातम्
॥ २४ ॥ आदितस्त्रीननुवाकाननुवाचयेत् ॥ २५ ॥ व्या-
ख्यातानि व्रतानि व्याख्यातानि व्रतानि ॥ २६ ॥ उदुत्तमं
वरुणपाशमिति मेखलामुन्मुञ्चति ॥ २७ ॥ इति मैत्रायणी-
यमानवगृहेषु त्रयोविंशः खण्डः प्रथमः पुरुषश्च समाप्तः ॥

कर वेदान्त पढ़ना चाहता हो तो पु० १ खं० २१ में लिखे सूत्राकर्षण विधि के अनुसार क्षौर कराके पढ़े ॥ २३ ॥ उपनयन संस्कार प्रायः साङ्ग एक वेद के पढ़ने की होता है क्योंकि साङ्गीपाङ्ग सब वेदों का पढ़ लेना काल और अन्न अधिक लगने से सब का काम नहीं है । और यदि तीनों वेद पढ़ने के व्रत का कोई संकल्प करे तो उस का भी उपनयन के तुल्य व्याख्यान जानो ॥ २४ ॥ फिर इस त्रैवेदिक व्रत में आदि से लेकर तीन अनुवाकों का अनुवाचन करे ॥ २५ ॥ इस प्रकार में मानवगृह्य सूत्र का अभिप्राय यह है कि चातुर्होत्रिकी दीक्षा में उन दिव्य होताओं का होमादि द्वारा पूजन तथा चार, ऋः और सात् होताओं से होने वाले समहोत्रादि विषयक मन्त्र ब्राह्मण और कल्प ग्रन्थों का विशेष कर उस दीक्षा के समय अध्ययन करे । तथा आग्नि की दीक्षा में अग्नि-देव सम्बन्धी मन्त्र ब्राह्मण कल्पों की पढ़े और आश्वमेधिकी दीक्षा में अश्व-ब्रह्मचारी अश्वमेध सम्बन्धी मन्त्र ब्राह्मण कल्पों की पढ़े । ब्रह्मचारी के व्रतों का व्याख्यान ग्रन्थ के आरम्भ में और इसी कण्डिका के नवमादि सूत्रों में कर चुके हैं ॥ २६ ॥ (उदुत्तमं) मन्त्र पढ़ के ब्रह्मचारी मेखला उतारे ॥ २७ ॥ (अनुमान होता है कि पूर्वोक्त समाप्ति का चिह्न २६ वें सूत्र में है इस कारण यह सप्तादेशवां सूत्र समावर्तन संस्कार में होना चाहिये) ॥

यह मैत्रायणीय मानवगृह्यसूत्र का तेईशवां खण्ड तथा प्रथम पुरुष समाप्त हुआ ॥

इति श्रीमानवगृह्यसूत्रस्य भीमसेनशर्मनिर्मितायां
नागरीभाषावृत्तौ प्रथमपुरुषः समाप्तः ॥

अथ द्वितीयपुरुषारम्भः

औद्वाहिकं प्रेतपिता शालाग्निं कुर्वीत ॥ १ ॥ अन्यत्र ततः प्रेते पितरि प्रज्वलयन्तोऽग्निं जागरयेयुः पर्वणि ज्यौत्स्ने पुण्ये नक्षत्रेऽन्यत्र नवम्याः ॥ २ ॥ स्नातः शुचिरहृतवासाः ॥ ३ ॥ वाग्यतावरणिपाणी जागृतः ॥ ४ ॥ अवकाशेऽक्षतान्यवान् पिष्ट्वा मन्थमायौऽथनालम्बमिक्षुशलाकया बहुलम् ॥ ५ ॥ हिरण्यपाणिं सवितारं वायुमिन्द्रं प्रजापतिम् । विश्वान्देवानङ्गिरसो हवामहे । असुं क्रव्या-

भाषार्थः—जिस का पिता मर गया हो वह विवाहसम्बन्धी शालाग्नि नाम आक्सव्याग्नि को विधिपूर्वक स्थापित करे । माता पिता जीवित रहें तब तक उन की सेवा करे (मनु० अ० २ । २३५ । जब तक माता पिता जीवें तब तक अन्य कुछ भी धर्म उन की सेवा का बाधक न करे) ॥ १ ॥ यदि पिता ने स्वयं पुत्र की भाग देकर अपने से पृथक् कर दिया हो तो पिता के जीवित रहते हुए भी पुत्रों की अग्निस्थापन कर्म का अधिकार है । और यदि पुत्रों से अन्यत्र देशान्तर में पिता मर जावे तब दोनों दशा में अमावास्या पौर्णमासी पर्व तिथि में अथवा शुक्ल पक्ष में नवमी तिथि को छोड़ के जिस दिन पुण्य नक्षत्र हो उसी दिन प्रज्वलित करते हुए विधिपूर्वक अग्नि को स्थापित कर मरण पर्यन्त जागृत सचेत रखें ॥ २ ॥ प्रथम अभ्यधात का अङ्ग रूप स्नान करके दोनों पति पत्नी चौरदार नये दो २ वस्त्र धारण करें ॥ ३ ॥ अग्नि स्थापन से पहिली रातको उत्तरारणि को पति और अधरारणि को पत्नी हाथ में ले मौन हो कर जागरण करें ॥ ४ ॥ अगले दिन उषःकाल से पहिले भूमी सहित सबे जौ पीस कर पात्र में न लगती हुई देख की सलाई से बहुत से सत्तू घोले ॥ ५ ॥ (हिरण्यपाणिं) मन्त्र पढ़ के घोले हुए जौ के आटा को अरणी से निकाले अग्नि पर सेवन करे जिस से पहिला अ-

दं शमयन्त्वग्निम् ॥ इति मन्थेनाग्निमवसिञ्चति ॥ ६ ॥
 सोमोराजाविभजतूभाग्निर्विभाजयन् । इहैवास्तुहव्यवाह-
 नोग्निः क्रव्यादं नुदस्व ॥ इति कटे कृतायां वाग्निं समारो-
 प्य प्रहिणोति ॥ ७ ॥ क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमिदूरं । यमरा-
 ज्यंगच्छतुरिप्रवाहः । इहैवायमितरोजातवेदा देवेभ्योहव्या-
 वहतुप्रजानन् ॥ इत्यग्निमादाय दक्षिणाप्रत्यग् घरन्ति ॥ ८ ॥
 सहाधिकरणैर्यन्ति ॥ ९ ॥ स्वकृतइरिणे-सीसेमलिम्लुचामहे
 शिरोमिमुपबर्हणे । अव्यामसितायां मृष्ट्वाऽस्तंप्रंतसुदानवः ॥
 इति सीसमुपधाने न्यस्याध्यधि ॥ १० ॥ धाम्नोधाम्नइति
 तिस्रभिः परोगोष्ठं मार्जयन्ते ॥ ११ ॥ अनपेक्षमाणाः प्रत्या-
 यन्ति ॥ १२ ॥ नलैर्वेतसशाखया वा पदानि लोपयन्ते-मृ-
 त्योः पदानिलोपयन्ते यदेतद् द्राघीयआयुःप्रतिरंधानाः ।
 आप्यायमानाः प्रजयाधनेन शुद्धाः पूताभवन्तुयज्ञिवासः ॥ १३ ॥
 अनडूवाहंप्लवमन्वारमध्वं येनावेपत्सरमारपन्ती । इति ॥ १४ ॥

ग्नि घृत जावे ॥ ६ ॥ अथवा नयी बनायी हुई चटाई पर पहिले अग्नि को
 धरके अलग ले जावे ॥ ७ ॥ (क्रव्यादमग्निं०) मन्त्र पढ़ते हुए पहिले अग्नि
 को नैऋत्य दिशा में कुण्डों सहित ले जावें ॥ ८ । ९ ॥ फिर जंगल में स्वयं ब-
 नायी चटायी पर शिरो भाग में (सीसे मलिम्लु०) मन्त्र पढ़ के सीसा धर
 कर उस के समीप २ लाये हुए कुण्डों सहित अग्नि को स्थापन कर देवे ॥ १० ॥
 फिर अग्निस्थान से पृथक् (धाम्नो धाम्न०) इत्यादि तीन मन्त्रों से सब
 लोग अपने पर मार्जन करें ॥ ११ ॥ फिर पीछे की न देखते हुए घर की लौटें
 ॥ १२ ॥ और लौटते हुए नरसल दृशों की कूची से वा बेंत की डाली से पृ-
 थिवी में चलने से हुए अपने पशुओं के चिह्नों को (मृत्योः पदानि०) मन्त्र प-
 ढ के बिगाड़ते चले आवें ॥ १३ ॥ क्रव्याद नाम मुर्दा जलाने वाले अग्नि को

अग्न्यायतनमुद्धृत्यावोक्ष्याग्नेयाधेयिक्यान्पार्थिवान्संनारा-
 न्निवपत्यूपसिकतवर्जम् ॥ १५ ॥ अरणिभ्यामग्निं मथित्वा
 हिरण्यशकलं च न्युप्य प्रागुदयादुपस्थकृतो-भूरिति ज्वल-
 न्तमादधाति ॥ १६ ॥ गौर्वासः कांस्यं च दक्षिणा ॥ १७ ॥

इति प्रथमः खण्डः समाप्तः ॥

प्रागुदञ्चं लक्षणमुद्धृत्यावोक्ष्य, स्थण्डिलं गोमयेनोप-
 लिप्य मण्डलं चतुरस्रं वाग्निं निर्मथ्याभिमुखं प्रणयेत् ॥ १॥
 दर्भाणां पवित्रे मन्त्रवदुत्पाद्याग्नेयं स्थालीपाकं प्रपयति
 ॥ २ ॥ पवित्रान्तर्हितेऽप आनीय सण्डुलानोप्य मेक्षणेन-

दूर जंगल में छोड़ कर लीटे हुए लोग (अनह्वाहं) मन्त्र पढ़ की वेलका स्प-
 र्श करें ॥ १४ ॥ फिर से बनाये अग्निस्थापन के कुण्ड में किंचित रेखा करने
 से उठी सही को फेंक के जल सेचन करके ऊपर की सही और बालू को छोड़
 कर झर्रर की छोदी चीटी के बिल की और भूरे की छोदी सही तथा कंकड़ी
 और जल इन अग्न्याधान सम्बन्धी पार्थिव पदार्थों को अग्नि के स्थापन के
 कुण्ड में नीचे धरे ॥ १५ ॥ फिर सब के ऊपर खर्व का टुकड़ा कुण्ड में घर के
 उस पर अरणियों द्वारा मथ के निकाले प्रज्वलित अग्नि की सूर्योदय से पहि-
 ले पदमासन से बैठा हुआ (भूः) ऐसा पढ़के कुण्ड में स्थापित करे ॥ १६ ॥
 उस समय गौ वस्त्र और कांसे का पात्र अर्घ्यु को दक्षिणा में देवे ॥ १७ ॥

यह प्रथम खण्ड समाप्त हुआ ॥

फिर यज्ञ शाला में कुण्ड से पृथक् पूर्व की पांच और उत्तर की एक रेखा
 करके वहाँ से किंचित सही फेंक जल सेचन करके गोलाकार वा चौरांग स्थ-
 ण्डिल वेदि की गोबर से लीप कर अग्नि अभ्यन करके सम्मुख रखे ॥ १ ॥
 दारों के दो प्रादेश मात्र पवित्रों की तीन दारों से (वैष्णवेत्यः) मन्त्र द्वारा
 छेदन करके अग्नि देवता के लिये स्थालीपाक पकावे ॥ २ ॥ पवित्र जिस
 पर धरें हों ऐसे चतुपात्र में जल लाकर उस में चावल गिरा के कुण्डस्थ अग्नि
 पर धर कर करछी स्थानी मेक्षण नामक यज्ञ पात्र से प्रदक्षिण क्रम से चावल

प्रदक्षिण पयायुवन् जावतण्डुलं अपयति ॥३॥ घृतेनानुत्पू-
 तेन नवनीतेन वोत्पूतेन शृतमभिघार्योत्तरत उद्वासयति ॥४॥
 इमंस्तोममर्हंतद्वत्यग्निं परिसमुह्य पर्युक्ष्य परिस्तीर्य पश्चाद्
 उग्नेरेकवृद्धिः स्तृणाति ॥५॥ उदक्प्राक्तूलान्दर्भान्प्रकृष्य द-
 क्षिणांस्तथोत्तरानग्नेणाग्निं दक्षिणैस्तत्तरानवस्तृणाति ॥६॥ द-
 क्षिणतोऽग्नेर्ब्रह्मणे संस्तृणात्यपरं यजमानाय, पश्चाद्ध्वं पत्न्यै
 ॥७॥ उत्तरतः संस्तीर्णे पवित्रे स्तुक्स्तुवावाज्यस्थालीं प्रक्षाल्य सं-
 स्तीर्णे द्वे द्वे प्रयुनक्ति ॥८॥ तूष्णीं दक्षिणत आज्यं निरूप्य मन्त्र-
 वत्पर्यग्निं कृत्वा तूष्णीं स्तुक्स्तुत्रौ संमृज्याऽदध्नेन त्वाचक्षुषा
 वेक्षइति पत्न्याज्यम्वेक्षते ॥ ९ ॥ तूष्णीमधित्रित्योप्राधि

और जल को मिलाता हुआ किंचित् पकावे सम्यक् गलने न पावे अर्थात् अ-
 धपके हों तब ॥ ३॥ जिस का उत्पन्न संस्कार न किया हो ऐसे घी से वा उ-
 त्पन्न किये मक्खन से स्तुक्वा द्वारा चरु का अभिघारण करके अग्नि से उत्तर
 में सतार कर धरे ॥ ४ ॥ फिर (इमंस्तोममर्हंत०) इस मन्त्र से अग्नि के सब
 ओर झाड़ के सब ओर जल सेवन और सब ओर कुशों से परिस्तरण करके
 अग्नि से पश्चिम में एक पक्ष पूर्व को अग्रभाग करके एक मूठा कुश बिछावे ॥ ५॥
 अग्नि के सब ओर कुश बिछाने की रीति यह है कि अग्निपुण्ड्र से उत्तर और
 दक्षिण में पूर्व को अग्रभाग करके तथा पूर्व पश्चिम में उत्तर को अग्रभाग करके
 बिछावे ॥६॥ अग्नि से दक्षिण में ब्रह्मा के लिये और ब्रह्मा से पश्चिम में यज्ञमान
 के लिये और यज्ञमान से दक्षिण पश्चिम को और पत्नी के लिये उन २ के आसन
 पर कुश बिछावे ॥७॥ अग्नि से उत्तर में बिछावे कुशों पर दो पवित्र स्तुक् स्तुव
 और आज्यस्थाली को प्रक्षालन करके बिछे कुशों पर दो २ पात्र धरे ॥ ८ ॥
 अग्नि से दक्षिण में तूष्णीं विना मन्त्र आज्यस्थाली में घृतपात्र से घी
 गिराके सूखे कुशगला कर घी के सब ओर मन्त्र पूर्वक फिराकर संभार्जन कुशों
 द्वारा तूष्णीं विना मन्त्र स्तुक् और स्तुवा का संभार्जन करे और (अदध्नेन त्वा०)
 मन्त्र पद के पत्नी घी को देखे ॥९॥ फिर तूष्णीं विना मन्त्र पदे अदध्नेन आज्य-

श्रित्य पश्चादग्नेरुपसाद्य मन्त्रवदुत्पूयावेक्षते ॥१०॥ तेजो-
ऽसीत्याज्यं यजमानोऽवेक्षते ॥ ११ ॥ आज्यस्थाल्यां स्तुवं
निधायाग्निं स्थालीपाकमन्वायातयत्यपरेण मेक्षणम् ॥१२॥
तूष्णीं प्राञ्चमिधममुपसमाधाय, ब्रह्माणमामन्त्र्य-ओंजुहुधी
त्युक्ते, दक्षिणेन हस्तेनान्तरेण जानुनी प्राडासीन आचारौ
जुहोति । प्राजापत्यमुत्तराहुं प्राञ्चं मनसा, ऐन्द्रं दक्षिणाहुं
प्राञ्चमेव ॥ १३ ॥ अथाज्यभागौ जुहोति । आग्नेयमुत्तराहुं
सौम्यं दक्षिणाहुं । समावनक्ष्णौ ॥१४॥ युक्तोवह । यदाकूतमि
ति द्वाभ्यामग्निं योजयित्वा । नक्षत्रमिष्टानक्षत्रदेवतां यजेत्ति
थितिधिदेवतामृतमृतुदेवतां च ॥ १५ ॥ उपस्तीर्याप उपस्पृश्य

स्थाली को अग्नि पर रखके तपा के उत्तरले अग्नि से पश्चिम में आज्यस्थाली को रखके (विष्णोर्मनसा०) मन्त्रपूर्वकं पवित्रों द्वारा उत्पवन करके धी को देखे ॥ १० ॥ फिर (तेजोऽसि०) मन्त्र पढ़के यजमान आज्य को देखे ॥११॥ फिर आज्यस्थाली में स्तुवा को धरके स्थालीपाक से आगे पूर्व में स्तुवा-सहित आज्यस्थाली को और उस से पश्चिम में मेक्षण को उत्तराग्रधरे ॥ १२ ॥ तदनन्तरतूष्णीं विना मन्त्र पढ़े अग्नि पर पूर्व की अग्रभाग कर २ सन्निधा धरके (ब्रह्मन्जुहोम्यामि) ऐसा कहके ब्रह्मा से आज्ञा मांगे ब्रह्मा के (ओंजुहुधि) कहने पर पूर्वोभिमुख बैठा दोनों घोंटू (जानु) के बीच में हाथ करके द-हिने हाथ से निम्नरीति से प्रथम आघार की दो आहुति करे प्रजापति का मन से ध्यान करता हुआ प्रजापति देवता के लिये अग्नि कुण्ड के उत्तराहुं में पूर्व को झुक्ती हुई पहिली आघाराहुति स्तुवा द्वारा छोड़े । और इन्द्र दे-वता के लिये अग्नि कुण्ड के दक्षिणाहुं में पूर्वको झुक्ती दूसरी आघा-राहुति स्तुवा से छोड़े ॥ १३ ॥ अब आज्यभाग की दो आहुति निम्न लि-खित रीति से करे । अग्नि देवता के लिये कुण्ड के उत्तराहुं में और सोम देवता के लिये कुण्ड के दक्षिणाहुं में कुटिलता रहित सरल स्वभाव से दोनों आहुति स्तुवा में धी भर २ के छोड़े ॥ १४ ॥ तदनन्तर (युक्तोवह० । यदाकू

मेक्षणेन स्थालीपाकस्थावद्यति मध्यात् (प्रथमं) पूर्वाहुतिं
द्वितीयम् । पश्चाद्वाह्वोर्यदि पञ्चावदानस्य ॥१६॥ अवत्त
मभिघार्य स्थालीपाकं प्रत्यभिघारयति ॥१७॥ अग्नये स्वाहेति
मध्ये जुहोति ॥१८॥ यो देवानामसीति रौद्रस्य ॥१९॥ जया-
न्हुत्वाऽऽज्यस्य स्विष्टकृते सनवद्यत्युत्तराहुतिं तत्कृद्द्विमात्रम् ।
द्विर्वा यदि पञ्चावदानस्य ॥२०॥ अवत्तं द्विरभिघार्य नात ऊर्ध्वं
स्थालीपाकं प्रत्यभिघारयति ॥२१॥ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहेत्य-

तं०) इन दो मन्त्रों से अग्नि देवता का ध्यान करे अर्थात् अग्नि की स्वरूप
बर्णन कर्ता क्रियादि रूप से देखे । फिर उष होन के दिन की नक्षत्र जो तिथि
और जो ऋतु हो तथा उन २ नक्षत्र तिथि और ऋतु के जो २ देवता हों उन
सब के नाम से छः आहुति करे ॥१५॥ ये दश आहुति, घी से करके प्रथम खुवा से
थोड़ा घी खुच में उपस्तार रूप गिरा के दहिने हाथ से अलस्पृश कर मेक्षणद्वा-
रा चरु के बीच से एक आहुति भाग लेके खुच में धरे और चरु के पूर्वाहुति से-
मेक्षण द्वारा आहुति का दूसरा भाग ले यदि पाँच प्रवरों वाला यजमान हो
तो चरु के पश्चिमाहुति से तीसरा अवदान लेवे ॥१६॥ फिर चरु पात्र में जहाँ २
से आहुति भाग लिये हों वहाँ २ खुवा से घी छोड़ के खुच में धरे आहुति
भागों के ऊपर एक खुवा घीका प्रत्यभिघारण करे ॥१७॥ फिर (अग्नये स्वाहा)
मन्त्र से खुच के चतुरवत्त वा पञ्चावत्त का होम करे ॥ १८ ॥ और (यो
देवानां०) मन्त्र से रुद्र देवता के लिये चतुरवत्त वा पञ्चावत्त का प्रथमाहुति
के तुल्य होम करे ॥ १९ ॥ इस प्रकार प्रधान होम की दो आहुति स्थालीपाक
से करके तथा घी से जया होम की १३ आहुति करके खुच में उपस्तार
करके स्विष्टकृत के लिये चरु के उत्तरभाग से एक ही चार में आहुति
के द्वा भाग [एक अवदान अंगुष्ठ पर्वमात्र प्रमाण का होता है] लेवे यदि
यजमान पञ्चावत्ती हो तो तीन अवदान के बराबर एक साथ लेवे ॥ २० ॥
फिर खुच में ऊपर से अभिघारण करके चरु पात्र में जहाँ से अवदान लिया
है उस पर खुवा भर के घी छोड़े पर इस से आगे चरु का अभिघारण न करे
॥ २१ ॥ फिर उत्तर पूर्व ईशान कोण में अन्य आहुतियों से न मिलती हुई

संसक्तमुत्तराहुर्पूर्वाहुं जुहोति ॥२२॥ मेक्षणं दर्भांश्चाधायानु-
मतिभ्यां व्याहृतिभिश्च । त्वंनोअग्ने । सत्वंनोअग्ने । अया-
श्चाग्नेऽसोत्येताभिर्जुहुयात् ॥ २३ ॥ वितेमुञ्जामिरशनां विर-
श्मोनिति च हुत्वा पवित्रेऽनुप्रहृत्याज्येनाभिर्जुहोति ॥२४॥
एधोऽस्येधिषीमहीति समिधमादधाति । समिदसिसमेधि-
षीमहीति द्वितीयाम् ॥ २५ ॥ आपोऽअद्यान्वचारिषमित्यु-
पतिष्ठते ॥ २६ ॥ आपोहिष्ठीयाभिर्माजयते ॥ २७ ॥ पूर्ण-
पात्रं दक्षिणा ॥ २८ ॥ बर्हिर्नुप्रहरति ॥ २९ ॥ एतेन स्थाली-
पाकेन स्थालीपाकाः सर्वत्र व्याख्याताः ॥३०॥ इति द्विती-
यः खण्डः ॥

अग्नये स्वाहेति सायं जुहोति प्रजापतयइति द्वितीया-
म् ॥१॥ सूर्याय स्वाहेति प्रातः । प्रजापतयइति द्वितीयाम् ॥२॥

(अग्नये खिष्ट०) मन्त्र से खिष्टकृत आहुति देवे ॥ २२ ॥ पश्चात् सेतय और
ऊपरी दाभों की अग्नि में छोड़ कर अनुमति दो देवताओं के लिये (अन्वद्य-
नोऽनुमति०) इत्यादि दो मन्त्रों से तीन व्याहृतियों से तथा (त्वंनो अग्ने०)
इत्यादि चार मन्त्रों से घी की आहुति दे के पवित्रों का होम कर देवे ॥२३॥२४॥
फिर (एधोऽस्ये०) मन्त्र से एक तथा (समिदसि०) से दूसरी समिधा घी में
हुवो के चढ़ावे ॥ २५ ॥ फिर (अपोऽअ०) मन्त्र से अग्नि का उपस्थान करे ॥२६॥
तदनन्तर (आपोहिष्ट०) इत्यादि तीन अचाओं से मार्जन करे ॥२७॥ दोसौ
रूप्य २५६ मुट्ठी भर चावल का पूर्ण पात्र दक्षिणा में देवे ॥ २८ ॥ पश्चात् वे-
दि के सब ओर बिछाये तथा अन्य कुशों का अग्नि में होम करे ॥ २९ ॥ इ-
सी प्रकार सर्वत्र स्थालीपाकों का विधान जानो ॥ ३० ॥

यह दूसरा खण्ड समाप्त हुआ ॥

अब नित्य प्रति सायं प्रातःकाल का स्मार्त्त अग्निहोत्र दिखाने हैं (अ-
ग्नये स्वाहा) मन्त्र से एक और (प्रजापतये स्वा०) मन्त्र से तूष्णीं दूसरी आ-
हुति सायंकाल वैवाहिक अग्नि में दिया करे ॥ १ ॥ (सूर्याय० । प्रजापतये०)

अग्नीषोमीयः स्थालीपाकः पौर्णमास्यामैन्द्राग्नोऽमावा-
स्यायाम् । उभयत्र चाग्नेयः । आगन्तुः पूर्वः पौर्णमा-
स्यामुत्तरोऽमावास्यः याम् ॥ ३ ॥ आश्वयुज्यां पौर्णमास्यां
प्रातर्नित्येषु स्थालीपाकेषु स्थालीपाकमन्वायातयति ॥४॥
तस्याग्निं रुद्रं पशुपतिमीशानं त्र्यम्बकं शरदं पृषातकं गाहति
यजति ॥५॥ दधिघृतमिश्रः पृषातकः । तस्यानोमित्रावरुणा
प्रवाहवेति च हुत्वा । अम्भःस्थाम्भोवोभक्षीयेति गाः प्रा-
शापयति ॥६॥ अत्रसृष्टाश्रवसेयुः ॥७॥ ब्राह्मणान् घृतवद्भोज-
येत् ॥८॥ नानिष्टाग्रयणेन नवस्याशनीयात् ॥९॥ पर्वण्याग्रयणं
कुर्वीत । वसन्ते यवानां शरदि ब्रीहीणाम् ॥१०॥ अग्रपाकस्य

ये दो आहुति प्रातःकाल करे । प्रत्येक पौर्णमासी को अग्नीषोम देवता के
लिये तथा प्रत्येक अमावास्या में इन्द्राग्नी देवता के लिये स्थालीपाक बनाके
पूर्ववत् होन करे । और पौर्णमासी अमावास्या दोनों में अग्नि देवता के
लिये स्थालीपाक का होन करे । तथा आग्रयणादि पर्वों में शान्त्याद्यर्थ जो
नैमित्तिक कर्म कहा है उस को पौर्णमासी में पहिले और अमावास्या में पीछे से
करे ॥३॥ आश्विन मास की पौर्णमासी में नियम से कहे अन्यस्थाली पाकों में
ही इस स्थालीपाक को भी पका लेवे अर्थात् संमिलित (तन्त्र) कर देवे ॥४॥
उस आश्विन की पौर्णमासी में अन्यो के साथ बनाये चरु से (अग्रयेस्वाहा)
इत्यादि नाम मन्त्रों को पढ़ने के अग्नि, रुद्र, पशुपति, ईशान त्र्यम्बक और श-
रदु देवताओं के लिये यज्ञ करे तथा निम्न प्रकार पृषातक से गौओं का पूजन
करे ॥५॥ दही और घी के मेल का नाम पृषातक है । उस पृषातक से (आनोमि-
त्रा०) इत्यादि दो मन्त्रों से अग्नि में आहुति देकर (अम्भःस्थ०) मन्त्र से शेष
पृषातक गौओंको खवावे ॥६॥ गौएं उस समय बल्लडों से पृथक् रखी जावें ॥७॥
ब्राह्मणों को घृत सहित भोजन कराया जावे ॥८॥ नवान्नेष्टि किये बिना नयी
अन्न न खावे ॥९॥ वसन्त ऋतु की पौर्णमासी अमावास्यामें जो से और शरदू का
में चावलों से नवान्नेष्टि करे ॥१०॥ पहिलेपहिल पके जी वा चावलों का दूध

पयसि स्थालीपाकं प्रपथित्वा । तस्य जुहोति । सजूर-
ग्नीन्द्राभ्यां स्वाहा । सजूर्विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा । सजूर्द्या
वापृथिवीभ्यां स्वाहा । सजूः सोमाय स्वाहेति ॥११॥ शरदि
सोमाय श्यामाकानां वसन्ते वेणयवानाम् । उभयत्र वा-
ज्येन ॥१२॥ वत्सः प्रथमजो दक्षिणा ॥१३॥ ब्राह्मणएव हविः
शेषं भुञ्जीतेति श्रुतिः ॥१४॥ इति तृतीयः खण्डः समाप्तः ॥

पशुना यक्ष्यमाणः पाकयज्ञोपचाराग्निमुपचरति ॥१॥
पशुवन्धवत्तूणीमावृद्धदेवताहोमवर्जम् ॥२॥ प्रोक्ष्यानुमान्यो-
पपाय्य पर्याग्निं कृत्वा शामित्रं प्रणीय वपाश्रपणीभ्यामुदञ्च
प्रक्रममाणमन्वारभन्ते ॥३॥ संज्ञप्यमानमवेक्षते ॥४॥ संज्ञप्तं

में स्थालीपाक पका के उस का आधारादि के पश्चात् (सजूरग्नी०) इत्यादि चार
सन्त्रों से प्रधान होन करे ॥१॥ इन में जो चौथी आहुति सोन देवता के लि-
ये कही है उस को शरद ऋतु में साना से और वसन्त में वेणुयवों से करे अथ
वा दोनों समय सोनाहुति जी से करे ॥१२॥ पहिले बार व्याना बद्धा हम ल-
वाक्रेष्टि में आचार्य को दक्षिणा में देवे ॥१३॥ क्षत्रिय वैश्यों को भी नवाक्रेष्टि
आदि यज्ञ करने का तो अधिकार है परन्तु श्रुति में लिखा है कि क्षत्रियादि के
यज्ञ में भी इविःशेष क्रत्वित्व ब्राह्मण ही खावे यजनान् भागभी क्षत्रियादि न-
खावे ॥ १४ ॥ यह तीसरा खण्ड पूरा हुआ ॥

पशुयोग करना चाहता हुआ पूर्व कहे पाकयज्ञ की रीति (पु० २ खं० २ खं० १)
में कहे अनुसार वेदि में चिह्नादि कर अग्नि का सन्त्यन स्वापनादि करे ॥१॥
मानवकल्प सूत्र में लिखे पशुवन्ध कर्म के अनुसार यहां भी देवता होन को छोड़
के अन्य सब कृत्य बिना मन्त्र तूखीं करे ॥२॥ पशु का प्रोक्षण, स्तुति, जल पिला-
ना और पशु के सब और अग्नि का अङ्गार घनाना उत्तर में शामित्रशाला को
नियत करना जब अथर्वपशुकी उत्तर की ओर ले चले तब वपाश्रपणी से उस
का अन्वारम्भ यजनानादि करे इत्यादि सब काम बिना मन्त्र करें ॥३॥ पशु के
संज्ञपन की यजमान देखे ॥४॥ फिर पशु को खान करा के इन्द्राग्नी आदि जि०

स्नपयित्वा । यथादेवतं वषामुत्कृत्य श्रपयित्वाऽऽधारावा-
ज्यभागौ हुत्वा । जातवेदोवषयागच्छ देवांस्त्वंहिहोता प्र-
थमो वभूव । घृतस्याग्नेतन्वासंभव सत्याः सन्तु यजमानस्य
कामाः स्वाहा ॥ इति वषां जुहोति ॥ ५ ॥ स्वाहास्वाहेति
परिवर्ष्यौ ॥ ६ ॥ स्थालीपाकमन्वायातयति । समानदेवतं
पशुना ॥ ७ ॥ तद्भुतावाज्यभागौ ॥ ८ ॥ अनिरुक्तः स्विष्ट-
कृत् ॥ ९ ॥ पाशुबन्धकानामवदानानां रसस्यावदाय दैव-
तैः प्रचर्य वसाहोमशेषेण दिशः प्रतियजति । यथा वाजि-
नेन । वनस्पतिमाज्यस्य ॥ १० ॥ जयान् हुत्वा त्र्यङ्गाणां
स्विष्टकृते समवद्यति ॥ ११ ॥ स्थालीपाकेन शेषो व्याख्या-

स देवता के उद्देश से पशुयाग हो उस के लिये वषा निकाल के पका कर तथा
आधाराज्यभागों का होम करके (जातवेदोवषया०) मन्त्र से वषा-
श्रपणी पर पकायी वषा का अग्नि में होम करे ॥ ५ ॥ (स्वाहा-
देवेभ्यः) इस मन्त्र को पढ़ के वषाहोम से पहिले एक आहुति घी
की करे और (विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा) मन्त्र से वषा होम के पश्चात् घी की
एक आहुति देवे ॥ ६ ॥ फिर पकाये हुए पुरोडाश स्थानी स्थालीपाक का
अभिधारण कर उत्तर में उढ़ाने करके पूर्व कहे अनुसार आहुति भाग सूत्र
में लेकर जिस देवता के लिये पशुयाग हो उसी के लिये स्थालीपाक का हो-
म करे ॥ ७ ॥ आज्यभागों का होम वषा होम से पहिले इस में अवश्य करे
किसी कारण से विकल्प न माने ॥ ८ ॥ स्विष्ट कृत् आहुति में स्विष्ट कृत् श-
ब्द की छोड़ के (अग्नेये स्वाहा) घृतना ही मन्त्र यहाँ पढ़े ॥ ९ ॥ फिर पशु-
बन्ध याग सम्बन्धी अवदान लेकर संहित देवताओं के लिये होम करके वसा
होम से पहिले घी से वनस्पति होम करे फिर वसा होम से शेष बची वसा
को वाजिन के तुल्य पदक्षिण क्रम से सब दिशाओं में छोड़े ॥ १० ॥ फिर
जया होम घी से करके तीन अंगों से स्विष्टकृत् आहुति के लिये अवदान
लेवे । सूत्र ९ में कहे प्रकार इस अवसर में स्विष्टकृत् आहुति का होम करे ॥ ११ ॥

तः ॥ १२ ॥ पशोः पशुरेव दक्षिणा ॥ १३ ॥ इति चतुर्थः ख-
ण्डः समाप्तः ॥

रौद्रः शरदि शूलगवः ॥ १ ॥ प्रागुदीच्यां दिशि ग्रा-
मस्यासकाशे निशि गवां मध्येऽतष्टो यूपः ॥ २ ॥ प्राक्स्वि-
ष्टकृतोऽष्टौ शोणितपुटान् पूरयित्वा-नमस्ते रुद्रमन्यव इति
प्रभृतिभिरष्टभिरनुवाकैर्दिक्ष्वन्तर्दिक्षचोपहरेत् ॥ ३ ॥ नाऽशृतं
ग्राममाहरेत् ॥ ४ ॥ शेषं भूमौ निखनेदपि चर्म ॥ ५ ॥ अपूपा-

पृ. २ खं २ में कहे स्थालीपाक के अनुसार इस पशुबन्ध कर्म का शेष कृत्य जानो ॥ १३ ॥ इस पशुयाग में पशु ही दक्षिणा में दिया जाय ॥ १४ ॥ यह चौथा खण्ड पूरा हुआ ॥

भाषार्थः—शरद् ऋतु में रुद्र देवता के लिये शूलगव नामक यज्ञ करे ॥ १ ॥ ग्राम वा नगर से ईशान दिशा के एकान्त शुद्ध जंगल में रात में गौओं के बीच बिना छिन्ना [यहां अठ पकलू यूप न होगा] यूप नामक यज्ञ स्तम्भ गाड़े ॥ २ ॥ स्विष्टकृत आहुति से पहिले अंजुली में आठ बार शोणित भर २ के प्रदक्षिण क्रम से ईशानादि आठ दिशाओं में मुक्त कर २ (नमस्ते रुद्र) इत्यादि अनुवाकों से समर्पण करे ॥ ३ ॥ यदि ग्राम में हविष्य लावे तो विन पका कदापि न लावे ॥ ४ ॥ शेष बचे हविष्य को चर्म सहित पृथिवी में खोद कर गाड़ देवे ॥ ५ ॥ कोई ऋषि वा आचार्य अपूप नाम पुरोडाश वा सालपुञ्जाओं की ही पाकयज्ञ के पशु कहते मानते हैं । इस पक्ष में शोणित निवेदन का क्या नी अपूर्णों में से घी ले २ कर (नमस्ते) आदि मन्त्रों से समर्पण किया जायगा । शृङ्खलामूत्रों में कहे सभी पशुयागों के लिये यह सामान्य कर सूत्रकार ने प्रत्यारूपाय दिखाया है । सो जैसे फांसी देने वा अन्य प्रकार से किहू की मरवा देने का अधिकार राजा का ही है साधारण का नहीं । तथा मनुष्य को अच्छा करने के लिये धीर फाड़ करने का अधिकार अच्छे २ डाक्टर वैद्यों का ही है सब का नहीं जैसे कमल के पत्तों पर जल नहीं लिपता पर अन्य सब पत्तों भांग जाते हैं वैसे ही उत्तमाधिकारी ज्ञानी विद्वानों के लिये ही पशु-

नेके पाकयज्ञपशूनाहुः ॥ ६ ॥ इति पञ्चमः खण्डः समाप्तः ॥

अथातो ध्रुवाश्वकल्पं व्याख्यास्यामः ॥१॥ आश्वयुज्यां
पौर्णमास्याम् ॥ २ ॥ ऋत्विगव्यङ्गः स्नातः शुचिरहतवासाः
॥३॥ प्रागस्तमयान्निष्क्रम्योत्तरतो ग्रामस्यपुरस्ताद्वा शुची
देशेऽश्वतथस्याधस्तान्न्यग्रोधस्य वाऽपां वा समीपे वेद्याकृ-
तिं कृत्वा तस्यां चतुष्कोणवनस्पतिशाखायामवसक्तचीरायां
गन्धस्त्र्यम्बकवत्यां [अगृहीतशुक्लमाल्यनिकरवत्यां] चतु-
र्दिशं विन्यस्तोदकुम्भसहिरण्यबीजपिटिकायामपूपसूस्तर-
लाजोल्लोपिकमङ्गलफलाक्षतवत्यां सर्वगन्धसर्वरससर्वा
षधीः सर्वरत्नानि चोपकल्प्य प्रतिसरदधिमधुमोदकस्वस्ति

याग है । ऐसे घोर कल काल में कोई ऐसे पशुयागों का अधिकारी नहीं है ।
। यदि सम्प्रति कोई शूलगव वा खं० ९ । पु० २ में कहे पशुयागादि करना
चाहे तो वह पुरोडाश वा मालपुत्रादि से स्तन २ के प्रत्यास्नाय करे । यही
सारांश जानो ॥ यह पांचवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भाषार्थः—जिस यजमान के घर पर घोड़े रहते हैं वह घोड़ों की पुष्टि
और दृढ़ स्थिति के लिये आश्विनमास की पौर्णमासी के दिन ध्रुवाश्व क-
ल्पनामक यज्ञ इस ऋते खण्ड में कहे अनुसार करे ॥ १ । २॥ इस कर्म के ऋ-
त्विग् किसी वस्तुआदि अंग से हीन नहीं स्नान करके शुद्ध हुए नये धीरेदा-
र वस्त्र पहिनें ॥ ३ ॥ सूर्यास्त होने से पहिले ग्राम वा नगर से निकल के पू-
र्व वा उत्तर शुद्ध स्थान में जाकर पीपल वा वटवृक्ष के नीचे अथवा जलाशय
के समीप पाशुक यज्ञ की वेदि के तुल्य वेदी बनाकर उस के चारो कोणों पर
किसी यज्ञिय वनस्पति की शाखा गाड़ें चारों दिशा में चित्र विचित्र पता
का लगावे, जिस में बन्धन तथा अगर आदि सुगन्ध, पुष्पमाला तथा रास्ना-
नामक लता के पत्रादि की माला बन्धनवारादि में लगी हों तथा सब ओर
जिस में सफेद फूल बिछाये गये हों तथा सुवर्ण लिन के भीतर डाला गया
हो ऐसे बीजों से सरी पिटारी और जल से भरे घड़ा जिस के चारों दिशा

कनन्यावर्तवत्यामग्निं प्रणीय । अश्वत्थ [पलाश] ख-
 दिररोहितक्रीदुम्बराणामन्यतमस्येधममुपसमाधाय तिस्रः
 प्रधानदेवता [इति] यजत्युच्चैःश्रवसं वरुणं विष्णुमिति
 स्थालीपाकैः पशुभिश्चाश्विनौ चाश्वयुजौ चाज्यस्य ॥४॥
 जयान्हुत्वा । याऽओषधयः । समन्यायन्ति । पुनन्तु मा-
 पितरः । अग्नेर्मन्वइति चतुर्भिर्नुवाकैरपोऽभिमन्त्र्याश्वा-
 न्सनपयन्ति ॥ ५ ॥ गन्धस्तग्दामभिरलङ्कृत्य प्रदक्षिणं दे-
 वयजनं त्रिःपरियन्ति ॥ ६ ॥ प्रहर्षं कारयन्ति ॥ ७ ॥ इष्टे
 यथास्थानं व्रजन्ति ॥ ८ ॥ गौरनड्वांश्च दक्षिणा ॥९॥६खंडः

में धरे हों तथा, पूजा संकलपारे खमखस भुंजी खीले अन्ननाधान वा चा-
 वल और संगलफन जिम में विद्यमान हों तथा सद्य सुगन्ध सर्व रस तथा
 ग्राम और वनकी सब ओषधियां जिम में विद्यमान हों और सब रत्न जिम
 में विद्यमान हों तथा कलावा नया सूत दही शहद बलहू जिम में धरे गये
 हों तथा चार दूवाजे बन्दनवार सहित हों तथा जिम के बीच गोल घर हों
 ऐसी वेदि के बीच अग्नि को स्थापित करके खेर लालकरंज और गूगरी इन
 में से किसी एक वृक्ष की समिधारख के उसै अवा वरुण और विष्णु इन तीन
 प्रधान देवताओं के लिये पूर्वोक्त प्रकार से बनाये स्थालीपाक द्वारा और पशु-
 ओं द्वारा यज्ञ करे तथा अश्विनौ और अश्वयुज् देवताओं के लिये घीसे होम
 करे ॥ ४ ॥ फिर जया होम करके (या ओषधे) इत्यादि चार अनुवाकों से
 जल का अभिमन्त्रण करके घोंड़ों को स्नान करावे ॥ ५ ॥ केशर चन्दनादि सु-
 गन्ध पुष्पमाला और रास्नादिक लताओं की माला आदि से घोड़ों को सुभू-
 चित करके वेदि के सब ओर तीन बार घोड़ों से प्रदक्षिणा करावे ॥ ६ ॥ तद-
 नन्तर घोड़ों से हॉसने का शब्द करवावे ॥ ७ ॥ सामान्य प्रकरण में कहे अ-
 नुसार आरंभ समाप्ति का शेष काम यहां भी पूर्ववत् जानो । यज्ञ हो जाने
 पर सब लोग अपने २ स्थान को जावे ॥ ८ ॥ इस प्रवाश्वकल्प कर्म की समा-
 प्ति में एक गौ तथा एक बैल दक्षिणा में देवे ॥ ९ ॥ यह बड़ा खंड पूरा हुआ ॥

आग्रहायण्यां पौर्णमास्यां पयसि स्थालीपाकं श्रुपयित्वा
 तस्य जुहोति-अपःश्वेतपदागहि पूर्वेणचापरेणच । सप्त च
 वारुणीरिमाः प्रजाः सर्वाश्च राजवान्धव्यः स्वाहा ॥ श्वेतो
 रुपत्यो विदधात्यश्वो दधद्गर्भं वृषः सृत्वयीं ज्योक् । स-
 मंजनाश्चक्रमपोवसानाः प्रोषादसाविरसिविश्वमेजत् । श्वे-
 ताय रौषिदश्वाय स्वाहा ॥ नवै श्वेतस्याभ्याचारे अहि-
 र्जघान किंचन । श्वेताय वैतहव्याय स्वाहा ॥ अभयं नः प्राजा-
 पत्येभ्यो भूयात्स्वाहा ॥ इति ॥ १॥ स्वस्तरऽहृतं वास उदग्दश-
 मास्तीर्योदकांस्येऽश्मानं ग्रीहीन्यवान्वाऽस्य परिषिञ्चति-
 स्योनापृथिविभवेति द्वाभ्यां सुत्रामाणमिति द्वाभ्याम् ॥ २॥
 शमीशाखया च सपलाशयोदञ्चं त्रिः समुन्मार्ष्टि-स्योना
 पृथिविभवेति द्वाभ्यां सुत्रामाणमिति द्वाभ्यां नमोऽस्तु सर्पेभ्य
 इति तिसृभिश्च ॥ ३ ॥ शाम्यन्त सर्पाः स्वशया भवन्तु ये
 अन्तरिक्ष उत ये दिविश्रिताः । इमां महीं प्रत्यवरोहेम ।

भाषार्थः—आग्रहण नास की पौर्णमासी के दिन दूध में पु० २ खं० १ में लिख
 अनुसार स्थालीपाक पकाके आधारादि सामान्य कृत्य करके (अपःश्वेत०)
 इत्यादि मन्त्रों से स्थालीपाक की चार प्रधानाहुति करके जयादि होस अ-
 ष्वर्य ब्रह्मा की दक्षिणा और ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १॥ इस कर्म का नाम
 सर्पयाग है । फिर रात को अश्वर्य यजमान को स्वस्तरारोहण कर्म करावे । प्रथम
 विद्यये हुए कीमल पलाल पर उत्तर की चीरा करके नया वस्त्र द्वितयी वा चौतयी
 आदि विद्यावे । फिर लल जिप्त में सरा हो ऐसे कांसे के पात्र में एक पत्थर
 तथा लौ वा धानो को (स्योना पृथिवि०) इत्यादि चार मन्त्रों से गिरावे
 ॥ २॥ फिर पत्थर सहित शमी (खरो) कर वृक्ष की डाली से कांसे के पात्र से लल
 ले २ कर (स्योना पृथिवि०) इत्यादि सात मन्त्रों से विद्योना परमार्जन करे ॥ ३॥
 फिर रात्रि की सोने के समय यजमानादि सब को उस विद्योना पर पूर्व की
 शिर पश्चिम की पग करा २ के दक्षिण से उत्तर की ओर को (शाम्यन्तु सर्पाः०)

शिवामजस्तां शिवां शान्तां सुहेमन्तामुत्तरामुत्तरां समां क्रि-
यासम् ॥ इति ज्येष्ठप्रथमानुदीच आवेशयति ॥ ४ ॥ उदी-
र्ध्वं जीवो असुर्न आगादपः प्रागात्तम आज्योतिरेति । अरि-
कपन्थां यातवे सूर्याग्नमग्निं यत्र प्रतरं न आयुः ॥ इति क-
निष्ठप्रथमानुज्जिहते ॥ ५ ॥ चैत्र्यामुद्रोहणम् ॥ ६ ॥ न त-
त्र स्थालीपाको न शाखया समुन्मार्ष्टि ॥ ७ ॥ अयंतल्पः प्र-
तरणो वसूनां विश्वाविभ्यतल्पो अत्मान् । ज्योग्जीवेम स-
र्ववीरावयंतस ॥ इति तल्पमभिमन्त्रयते ॥ ८ ॥ त्रीणि ना-
भ्यानि फाल्गुन्यामाषाढयां कार्तिक्याम् ॥ ९ ॥ तासु ना-
धीयीत ॥ १० ॥ तासु पयसि स्थालीपाकः स व्याख्यातः ॥ ११ ॥
इति सप्तमः खण्डः समाप्तः ॥

इत्यादि मन्त्र पढ़ के लिटावे । सब से दक्षिण में सब से बड़े की उस से
उत्तर २ में छोटे छोटी की लिटावे ॥ ४ ॥ फिर प्रातःकाल (उदीर्ध्व-
जीवो) मन्त्र पढ़ के छोटे छोटी की पहिले २ ठावे सब से पीछे सब से ब-
ड़े की उठावे ॥ ५ ॥ इस प्रकार पीप साध फाल्गुन चैत्र इन चार महीनों में
पलाल पर उक्त विधि से नित्य २ सोबें जायें । फिर चैत्रकी पौर्णमासी की रात्रि
को खट्वारोहण [खटिया पर सोने बैठने का विधि] करावे । यहां कांसे के
पात्र में पत्थर जी डाल के शमी शाखा से खट्वा का मार्जन और स्थाली पा-
क न करे ॥ ६ । ७ ॥ किन्तु (अयं तल्पः) मन्त्र पढ़ के खट्वा का अग्नि म-
न्त्र करे ॥ ८ ॥ और सोने के मन्त्र में पढ़े (इमां महीं) के स्थान में (इ-
मंतल्पं) तथा (सुहेमन्ता) के स्थान में (सुवसन्ता) ऊह करे । फाल्गु-
न, आषाढ़ और कार्तिक मास की तीन पौर्णमासी अतु सन्धि होने से सं-
वत्सरात्मक प्रजापति की नामिसुधानी हैं इन्हीं में श्रौत चातुर्मास्य पर्व
कहे हैं ॥ ९ ॥ इन तीनों में वेद न पढ़े ॥ १० ॥ किन्तु इन तीनों में दूध में स्था-
लीपाक पका के प्रधान अग्नि देवता के लिये होम करे श्रेष्ठ विधि पु० २ ।
खं० २ में व्याख्यान कर चुके हैं यह स्मार्त्तों में नाभ्य कर्त्त कहाता है ॥ ११ ॥

यह सातवां खण्ड पूरा हुआ ।

तिस्रोऽष्टकाः ॥१॥ ऊर्ध्वमाग्रहायण्याः प्राक्फाल्गुन्यास्तामि
 स्नाणामष्टक्यः ॥ २ ॥ तासु नाधीयीत ॥ १ ॥ तासु पयसि
 स्थालीपाकं प्रपयित्वा तस्य जुहोति—यादेव्यष्टकेष्वप-
 सापस्तमास्वपाअवयाअसि । त्वं यज्ञे वरुणस्यावयाअसि
 तस्यैतएनाहविषाविधेम ॥ १ ॥ उलूखलाग्रावाणोघोषमकु-
 र्वत हविःकृण्वन्तपरिवत्सरीयम् । एकाष्टके सुप्रजसः सुवी-
 रा ज्योम्जीवेमबलिहृतोवयन्ते ॥ २ ॥ यांजनाः प्रतिनन्दन्ति
 रात्रौधेनुमिवायतीम् । संवत्सरस्य या पत्नी सा नो अस्तु सु-
 मङ्गली ॥३॥ संवत्सरस्यप्रतिमां येत्वारारात्रीमुपासते । तेषा-
 मायुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेणसंसृजस्व ॥ ४ ॥ इति । चतस्रः
 स्थालीपाकस्य ॥ ४ ॥ अष्टकायैसुराघसे स्वाहेति सर्वत्रा-
 नुषजति ॥ ५ ॥ हेमन्तो वसन्तोऽग्नीष्मत्तवः शिवानः शि-
 वानो वर्षाअभयाश्चिरनः । वैश्वानरोऽधिपतिः प्राणदोनो
 अहोरात्रेकृणुतांदीर्घमायुः ॥ १ ॥ शान्तापृथिवीशिवमन्तरि-
 क्षं द्यौर्नादेव्यभयंकृणोतु । शिवा दिशः प्रदिश आदिशो न आ-
 पो विद्युतः परिपान्त्वयुः ॥२॥ आपोमरीचीः परिपान्तुवि-
 श्वतो धातासमुद्रोअभयंकृणोतु । भूतंभविष्यदुतभद्रमस्तुमे
 ब्रह्माभिगूर्तस्वराक्षाणः ॥ ३ ॥ कविरग्निरिन्द्रः सोमः सूर्यो
 वायुरस्तुमेअग्निर्वैश्वानरो अपहन्तुपापम् । बृहस्पतिः सवि-

अथ अष्टका कर्मका विवर दिखते हैं ॥१॥ अगहन की पौर्णमासी से फाल्गुन की पौर्णमासी तक कृष्णपक्षों की तीन अष्टमी होती हैं उन में वेद न पढ़े ॥२॥ उन अष्टमियों में दूध में स्थालीपाक बनाकर आधारादि विधिपूर्वक (या देव्यष्टके) इत्यादि चारों मन्त्रों के अन्त में (अष्टकायैसुराघसे स्वाहा) इ-
 तना जोड़ के स्थालीपाक की चार प्रधानहुति करे ॥ ४ । ५ ॥ फिर (हेमन्तो

ताशर्भयच्छतु श्रियंविराजंमयिपूषादधातु ॥ ४ ॥ विश्वआदि
 त्यावसवश्चसर्वे रुद्रागोप्पारोमरुतश्चसन्तु । ऊर्जंप्रजाममृतं-
 दीर्घमायुःप्रजापतिर्मयिपरमेष्ठीदधातु ॥ ५ ॥ इति पञ्चाज्य-
 स्य ॥ जयान्हुत्वेडामग्नइति स्विष्टकृदिति ॥ ७ ॥ एवं सर्वा-
 सु ॥ ८ ॥ इत्यष्टमः खण्डः समाप्तः ॥

उत्तमायाः प्रदोषे चतुष्पथेऽङ्गशो गां कारयेत् ॥ १ ॥ योय-
 आगच्छेत्तस्मै दद्यात् ॥ २ ॥ श्वोऽन्यां कारयेत् ॥ ३ ॥ तस्या वपां
 जुहयात् वहवपांजातवेदः पितृभ्यो यत्रैतान्वेत्थनिहितान्प
 राके । मेदसोधृतस्यकुल्याअमिनिःस्रवन्तु सत्याःसन्तुयजमा
 नस्यकामाःस्वाहा ॥ इति ॥ ४ ॥ अथास्यावक्षसउदगोदनं अययति
 ॥ ५ ॥ तस्याष्टकाहोमकल्पेन शेषो व्याख्यातः ॥ ६ ॥ अवशिष्टं भक्तं
 रन्धयति ॥ ७ ॥ श्वोऽवशिष्टं भक्तरन्धयित्वा पिण्डानामावृता
 त्रीन्मांसौदनपिण्डान्निदधाति ॥ ८ ॥ आहुमपरपक्षे पितृ-

घसन्तो०) इत्यादि सन्त्रों से पांच आहुति घी की करे ॥ ६ ॥ फिर जयादि
 होम करके (वृद्धामग्ने०) मन्त्र से स्विष्टकृत आहुति करे ॥ ७ ॥ इसी प्रकार
 सब साद्रपद की अष्टका में भी करे ॥ ८ ॥ यह आठवां खण्ड पूरा हुआ ॥

काशगुण की कृष्णाष्टमी की सन्ध्या के समय शीरहे पर गोयाग करे ॥ १ ॥
 जो २ यागदर्शनार्थ आते उसे २ यज्ञ का प्रसाद खोया देवे ॥ २ ॥ प्रातः का-
 ल अगले दिन अन्य गोयाग करे ॥ ३ ॥ आचारादिके पश्चात् उस की वपाका
 होम (वह वपां०) मन्त्र पढ़के करे ॥ ४ ॥ इसके वक्षः से उत्तर में भात प-
 कावे ॥ ५ ॥ इसका शेष विचार अष्टका होम के साथ व्याख्यान हो चुका जानो
 ॥ ६ ॥ अगले दिन प्रातःकाल शेष आधा भात रांधकर पिण्डदान की रीति से
 पितरों के लिये तीन पिंड देवे ॥ ७ ॥ इसी पु० २ खं० ५ में कहे अनुसार यहां
 भी पशु याग के स्थान में अपूर्णों द्वारा प्रत्याम्नाय ही सर्वथा श्रेयस्कर है

भ्यो दद्यात् ॥९॥ अनुगुप्तमन्नं ब्राह्मणान्भोजयेत् । नावेदवि-
द्भुञ्जीतेति श्रुतिः ॥१०॥ यदि गवा पशुना वा कुर्वीत प्रोक्ष-
णमुपपायनं पर्यग्निकरणमुल्मुकहरणं वपाहोममिति ॥११॥
त्रैधं वपां जुहुयात् । स्थालीपाकमवदानानि च ॥१२॥ सो-
मायपितृमतेस्वधानम इति जुहोति । यमायाद्गिरस्वतेपितृ-
मतेस्वधानम इति द्वितीयाम् । अग्नये कव्यवाहनायस्वधा-
नम इति तृतीयाम् ॥१३॥ एवं मासि मासि नियतम् । तन्त्रं
पिण्डपितृयज्ञे ॥१४॥ इति नवमः खण्डः ॥

वपाहोम जहां २ कहा है वहां २ सर्वत्र दूध की वा घी की मलाई चसी री-
ति से उत्तर के होम करना प्रत्यास्नाय ठीक है । पशुपाग लोक विद्विष्ट होने
से त्याग्य है पिण्डदान में अपूपका प्रत्यास्नाय जानो पितरों के लिये कण्ठ-
पक्ष में आहुत करना चाहिये ॥ ९ ॥ शूद्र पतित और रजस्वलादिने न
देखा हो ऐसे क्षुरक्षित शुद्ध मात खीर मोहनभोगादि अन्न तीन आदि
ब्राह्मणों को होमाहुतियों के पश्चात् आहुत में भोजन करावे । वेद की न जानने
वाले ब्राह्मण को आहुत में भोजन न करावे ऐसा श्रुति में लिखा है (मनु० अ०
३।१८४।१८६) ॥१०॥ यदि कोई कभी गौ वा अन्य पशु से होम यज्ञादि करे तो व-
हां प्रोक्षण, स्तुति, पर्यग्निकरण, उल्मुकहरण और वपाहोम इन कामों को स-
र्वत्र करे ॥११॥ सर्वत्र आहुत में वपाहोम, स्थालीपाक और अङ्गावदान होम इ-
न तीनों की (सोमायपितृ०) इत्यादि तीन मन्त्रों से तीन २ आहुति अग्नि
में करे ॥ १२ ॥ १३ ॥ इस प्रकार नहीने २ में प्रत्येक असावास्या के दिन पित-
रों के लिये आहुत करना चाहिये । और मानव कल्प सूत्र में कहे पिण्डपितृ
यज्ञ के साथ स्मार्त्त आहुत को तन्त्र कर लेना चाहिये ॥ १४ ॥ धर्मेनिष्ठ सर्व-
गुणी पुरुष को मांस भक्षण कदापि कर्त्तव्य नहीं इसी लिये मांसद्वारा आहुत
भी इन लोगों को नहीं करना चाहिये किन्तु मुन्यन्न खीरा खीर आदि से वे
आहुत करें । मांसाहार निषिद्ध होने पर भी जो २ जिस २ देश काल में मांसा-
हारी हों उन्हीं के लिये मांस से आहुत होमादि का विधान जहां तहां जानो ।
यह नवम खण्ड पूरा हुआ ॥

फाल्गुन्यां पौर्णमास्यां पुरस्ताद्धानांपूपाभ्यां भगं चार्चयन्
 च यजेत् ॥१॥ इन्द्रार्ण्या इविष्यान् पिष्ट्वा पिष्टानि समुत्पूय-
 यावन्ति पशुजातानि तावतो म्रियुनान्प्रतिरपाच्छपयित्वा
 कांस्येऽध्याज्यान्कृत्वातेनैव-रुद्राय स्वाहति जुहोति । ईशा-
 नायेत्येके ॥२॥ सायमपूपाभ्यां प्रचरत्यग्नीन्द्राभ्याम् ॥३॥ आ-
 ग्नेयस्तुन्दिलः । न तस्य स्त्रियः प्राश्नन्ति । सर्वाभत्याइतर-
 स्य ॥४॥ स्थालीपाकेनेन्द्राणीं-श्वोवा ॥५॥ संघेष्वेकवद्वर्हि
 रग्निराघोराज्यभागाहुतयः स्विष्टकृच्च ॥६॥ अग्निरिन्द्रः सो-
 मः सविता सरस्वत्यश्चिबनानुमती रेवती राका पूषा रुद्र

भाषार्थः—फाल्गुनी पौर्णमासी के दिन पहिले जी के धाना और चालपु-
 आ या पुरोहाय बना के भग तथा अर्घमा दो देवताओं का आचारादि पूर्वक-
 होम करके जया होम करे ॥१॥ तदनन्तर इन्द्राणी देवता के लिये जी वा चावल
 पीस खान कर नितने पशु यजमान के घर हों उनसे ही आटा दो दो २ पश्या
 कृति बनाके पकावे ऊपर से अभिघारण पु० सं० २ सू-४ के अनुसार करे फिर सा-
 यंकाल इन्द्राणी का चर घनवि उषी में उन पिष्ट पशुओं को डालदेवे फिर कांस्य के
 पात्र में नीचे घी डाल के उसपर परी से ऊपर से अधिक घी छोड़ के रुद्र देवता
 के लिये आचारादि के अनन्तर प्रधान होम करे । बिही का मत है कि ईशान
 देवता के लिये होम करे ॥२॥ तदनन्तर सायंकाल दो चालपुआ बना के शक्ति
 और इन्द्र देवता के लिये आचारादि के पश्चात् प्रधान होम करे ॥३॥ अग्नि दे-
 वता का अपूप बीच में मोटा हो । उस अग्निदेवता वाले अपूप का शेष भा-
 ग स्त्रियां न खावें । पर इन्द्र देवता वाले को सब बालवच्चे खावें पीछे दक्षि-
 णा दानादि कर्म समाप्त करें ॥४॥ तदनन्तर उषी दिन सायंकाल इन्द्राणी देव-
 ता के लिये स्थालीपाक बना के आचारादि पूर्वक इन्द्राणी का प्रधान याग
 और जयाहोमादि करे वा अगले दिन प्रातःकाल करे ॥५॥ अनेक प्रधान होम एक
 साथ मिला के तन्त्र करने हों तो एक पर्व कुश विद्याना अग्निस्थापन आचा-
 राज्यभाग और स्विष्टकृत् इन सब कामोंको एकही एकवार करे वारं २ सह्य ॥६॥
 अथ हलाभियोग कौं जिस में हल जोड़ने का आरम्भ किया जाय उसमें

इत्येतैरायोजन, पर्ययन, प्रवपन, प्रलवन, सीतायज्ञ, खल
यज्ञतन्तीयज्ञानबुद्धयज्ञैवेता देवता इति यजति । सांवत्स-
रेषु च पर्वसु ॥ ७ ॥ नद्युदधिकूपतडागेषु वरुणं यजति ।
ओषधिवनस्पतिषु सोमम् । अनादिष्टदेवतेष्वग्निम् ॥ ८ ॥

इति दशमः खण्डः ॥

अवसानं समं समूलम् ॥ १ ॥ दक्षिणाप्रवणमन्नकाम-

पहिले दिन नातृपूजा तथा आभ्युदयिक आहु करे फिर अगले दिन अग्नि,
इन्द्र, सोम, सोता, सविता, सरस्वती, सश्विनां, अनुमती, देवती, राका, पूषा
और रुद्र इन देवताओं का निम्न लिखित कर्मों में होमादि द्वारा पूजन करे।
आयोजन नाम खेत जोतने का सामान जोड़ना, प्रयस ही खेत में जाना प-
र्ययन, पहिले ही बीज बोना प्रवपन, प्रयसही पके खेत का काटना प्रलवन,
यदि हवन पाठान्तर माना जाय तो पहिले ही खेत का भरना, जहू आदि
से सीता नाम कूंड का पूजना सीतायज्ञ, जब अन्न कट कर खलियान में आ
जावे तब खलयज्ञ और गाहि बीज शैला के अन्न की राशी तयार हो तब
तन्तीयज्ञ होता और जब अन्न घर में आजावे तब भालामुकुटादि से बैल के
शीर्षों का पूजन करना अनुद्धयज्ञ कह्यता है । इन कर्मों में तथा वर्ष भरमें
आने वाले गुरुपूना शरद पूनी आदि पर्व दिनों में सर्वप्रायश्चित्तों के साथ २
अग्नि आदि देवताओं के लिये (अग्नये स्वाहा) इत्यादि नाममन्त्रों से प्रधान
होम करे । उस में सामान्य िधि से पवित्रादि का आसादनादि आचाराज्य
भाग पहिले और जया होमादि पीछे करे ॥७॥ नदी तलाव के मेल पर नदी
समुद्र के मेल पर और नये कुआ तालाव बनवाने पर वरुण देवता के लिये
प्रधान होम करे । ओषधियों के पकने पर वा खेत में प्रथम समागम होने पर
पीपल आदि वनस्पतियों के प्रथम मिलने पर सोम देवतायें प्रधान होम करे
और जहां कोई देवता निथल न हो वहां अग्निदेव के लिये होम करे ॥ ८ ॥

यह दशवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भावार्थः—अन्न पञ्चमहायज्ञादि कर्म दिखावेंगे सो महायज्ञ घर में होते हैं
इस लिये आलार्क्य अर्थात् तथा घर बनाने का विचार दिखाते हैं । जिस में
महायज्ञादि कर्म ठीक २ पूरे हो सकें ऐसा बड़ा समचीन भूमि में जहां दूध

स्य । मारुकास्तत्र प्रजा भवन्ति ॥२॥ सर्वतः समवस्तावम् ॥३॥
 समवस्तुत्य वा यस्मात्प्रागुदीचीरापो निर्वहेयुस्तद्वा ॥४॥
 गर्त्तं खात्वा यत्तैः पांशुभिः प्रतिपूर्येत तद्वा ॥ ५ ॥ यदि
 धारयिष्णूदकतरं स्यात् ॥६॥ इदमहं विशमन्त्राद्याय तेजसे
 ब्रह्मवर्चसाय परिगृह्णामीति वेश्म परिगृह्य । गर्त्तं हिरण्यं
 निधाय।च्युताय ध्रुवाय भौमाय स्वाहेति जुहोति ॥ ७ ॥ समी-
 चीनामासीति पर्यायैरुपतिष्ठते प्रतिदिशं—द्वाभ्यां मध्ये
 ॥ ८ ॥ उदकांस्थेऽश्मानं ब्रीहीन्यवान्वाऽभ्य परिपिञ्चति—
 स्योनापृथिविभवेति द्वाभ्याम् । सुत्रामाणमिति द्वाभ्याम् ॥
 शमीशाखया च सपलाशयोदञ्चं त्रिः समुन्मार्ष्टि—स्योना

दाभ आदि औषधियों के मूल मौजूद हों ऊपर मूँसि न हो वहाँ घर बनावे
 ॥१॥ जो अधिक अन्न चाहता हो वह दक्षिण के भाग में नीची मूँसि में घर
 बनावे पर वैसे मूँसि के घर में सन्तान उत्पन्न हो २ कर न र जाते हैं इस से
 दैसे स्थल में घर बनाना नग्न है ॥ २ ॥ जिस स्थल के सब ओर झरना आदिक
 से जल निकलता वा सब ओर नदी झील आदि हों वहाँ बनावे ॥ ३ ॥ अथ-
 वा जहाँ से निकल कर पूर्व वा उत्तर की जल बहता हो उस स्थल में घर ब-
 नावे ॥४॥ अथवा गर्त्त (गढ़ा) खोद के उसी खोदी सड़ी से फिर से नरे जिससे
 नीचे की छद्म सड़ी ऊपर हो जाय उस में घर बनावे ॥५॥ परन्तु जिस मूँसि
 में गिरा जल शीघ्र ही सूख जावे उस में घर बनावे ॥६॥ (इदमहं०) मन्त्र पढ़
 के घर बनाने के स्थल को सूत्र से नाप कर घेरा खेंचे । उस के बीच मध्यम
 खम्भ का गढ़ा खोदकर उस में सुवर्ण धर (के उस पर (अच्युताय०) मन्त्र से
 संस्कार किये घी की एक आहुति स्तुवा से छोड़े ॥ ७ ॥ फिर (समीचीना०)
 इत्यादि दिशाओं के पर्याय वाचक शब्दों से प्रत्येक दिशा में सुख कर २ प्र-
 दक्षिण उपस्थान करे और दो पर्यायों से बीच में उपस्थान करे ॥८॥ फिर कांसे
 के पात्र में जल लेके उस में पत्थर धान और कौ डाल के उस जल से (स्यो-
 नापृथिवि०) इत्यादि दो २ मन्त्र पढ़ २ दो बार सब घर को सींचे ॥ ९ ॥
 फिर पत्तों सहित शमीवृक्ष की शाखा से (स्योनापृथिवि०) दो से एक बार

पृथिविभवेति द्वाभ्याम् । सुत्रामाणमिति द्वाभ्याम्—नमो-
ऽअस्तु सर्पेभ्य इति तिसृथिश्च ॥ १० ॥ इदं तत्सर्वतोभ-
द्रमयसूजोऽयं रसः । प्राप्यैवं मानुषान्कामान्यदशीर्णीत-
दलप्स्यसि ॥ इति मध्यमां स्थूणामासिञ्च्य गर्तं आसिञ्च-
ति ॥ ११ ॥ इहैव तिष्ठनितरा तित्वलास्थिरावती । मध्ये-
पोषस्यपुण्यतामात्वा प्रापन्नघायवः ॥ आत्वाकुमारस्तरुण
आत्वापरिसृतःकुम्भः । आवत्सोजगतासह, आदध्नःकल-
शमैरयम् ॥ इति मध्यमां स्थूणामामन्त्रयते ॥ १२ ॥ वसू-
नांस्वावसुवीर्यस्याहोरात्रयोश्चेति गर्तं स्थूणामवदधाति ॥ १३ ॥
ऋतेऽवस्थूणाअधिरोहवंशो अग्नेविराजमुपसेधशक्रम् ॥ इ-
ति मध्यमं वंशमवदधाति ॥ १४ ॥ तूष्णीं शिष्टाः स्थूणा
वंशाश्च ॥ १५ ॥ प्राग्द्वारं दक्षिणद्वारं वा मापयित्वा । गृ-
हानहंसुमनसः प्रपद्येवीरहीत्येतया प्रपद्यते अथा पुरस्ताद्-
व्याख्यातम् ॥ १६ ॥ प्रैतुराजावरुणोरेवतीभिरस्मिन्स्थाने-

(सुत्रामा०) दो से द्वितीय बार तथा (नमोऽअस्तु०) इत्यादि तीन मन्त्रों
से तृतीय बार सब घर को उत्तर की ओर तीन बार काड़े ॥ १० ॥ फिर
(इदं तत्सर्वतो०) मन्त्र को पढ़ के बीच के खरुम का नार्जन कर विना मन्त्र
तूष्णीं गर्त में जल सेवन करे ॥ ११ ॥ (इहैव तिष्ठ०) इत्यादि मन्त्र पढ़
के मध्यम स्थूणा का आमन्त्रण करे ॥ १२ ॥ (वसूनांत्वा०) मन्त्र पढ़ के उस
मध्यम स्थूणा को गर्त में रखे ॥ १३ ॥ (ऋतेऽवस्थूणा०) मन्त्र पढ़ के
बीच के वांश (वंशेरा) को खरुम पर धरे ॥ १४ ॥ बाकी सब स्थूणाओं को
चन २ के गर्त में तथा बाकी वांशों को चन २ के स्थानों पर विना मन्त्र रखे
॥ १५ ॥ इस प्रकार पूर्व वा दक्षिण की द्वार वाला घर तयार करके उस में
(गृहानहंसु०) मन्त्र पढ़ के (पु० १ खं० १४ सू० ३-६) तक में बड़े अनुसार
घर में प्रवेश करे और पूर्व कहा अग्नि स्थापन भी इसी अवसर में करे ॥ १६ ॥

तिष्ठतुपुण्यमाणः । इरांवहन्तीघृतमुक्षमाणास्तेष्वहंसुमनाः
 संवसाम ॥ इत्युत्तरपूर्वस्यां दिशि प्रातिपानमुदकुम्भमव-
 स्थापयति ॥ १७ ॥ समुद्रं वः प्रहिणोमि स्वां योनिमभिगच्छ-
 त । अरिष्टा अस्माकं वीरामापरासेचि मत्पयः ॥ इत्युदञ्च-
 नम् ॥ १८ ॥ वास्तोष्पत्यं पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा तस्य
 जुहोति-अमीवहावास्तोष्पते । वास्तोष्पत इत्येताभ्याम् ।
 वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो ।
 अजरास्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान् प्रतिनो जुपस्व ॥ वास्तो-
 ष्पतेशमया संसदाते सक्षीमहिरण्यया गातुमत्या । पाहि क्षे-
 मउत योगे वरं नो यूयं पातस्वस्तिभिः सदानः ॥ इति ॥ १९ ॥
 जयप्रभृति समानम् ॥ २० ॥ इत्येकादशः खण्डः समाप्तः ॥
 वैश्वदेवस्य सिद्धस्य सायं प्रातर्बलिं हरेत् ॥ १ ॥ अग्नीषो-

पश्चात् (प्रैतु राजा०) इत्यादि मन्त्र पढ़ के घरके ईशान कोण में जल से भ-
 रा हुआ बड़ा सटका स्थापित करे ॥ १७ ॥ (समुद्रं वः०) मन्त्र से बड़े सटका
 में से जल लेने के लिये सटका के सनीप एक छोटा पात्र स्थापन करे ॥ १८ ॥
 फिर पु० २ खं० २ में लिखे अनुसार दूध में वास्तोष्पति देवता के निमित्त
 स्थालीपाक पकाकर पवित्रादि का आसादनादि आचारान्त्य साग पर्यन्त कर
 करके (अमीवहा०) (वास्तोष्पते०) (वास्तोष्पते प्रतर०) (वास्तोष्पते
 शमया०) इन चार मन्त्रों से वास्तोष्पति देवता के लिये स्थालीपाक से
 चार प्रधानाहुति करे ॥ १९ ॥ तदनन्तर जया होमादि यहां भी पूर्ववत् करे ।
 यह वास्तोष्पति यज्ञ वा वास्तुप्रतिष्ठा कर्म कहाता है ॥ २० ॥

यह ग्यारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—घर बनाने का प्रकार कह कर उस के स्थानविशेषों में बलि-
 हरणरूप वैश्वदेव नामक कर्म का व्याख्यान दिखाते हैं । विश्वदेवों के उद्देश
 से पकाया अन्न वैश्वदेव कहाता है उस अन्न से गृहस्थ सायं प्रातःकाल बलि
 कर्म करे ॥ १ ॥ इन पञ्चमहायज्ञों में यहां पहिले देवयज्ञ दिखाते हैं । अग्नि

मौ धन्वन्तरि विश्वान्देवान्प्रजापतिमग्निं स्विष्टकृतमित्ये-
वं होमो विधीयते ॥ २ ॥ अथ बलिं हरत्यग्नये नमः । सो-
माय । धन्वन्तरये । विश्वेभ्यो देवेभ्यः । प्रजापतये । अग्न-
ये स्विष्टकृत इत्यग्न्यागार उत्तरामुत्तराम् ॥ ३ ॥ अद्भ्य इत्युद-
कुम्भसंकाशे ॥ ४ ॥ ओषधिभ्य इत्योषधिभ्यो वनस्पतिभ्य
इति मध्यमायां स्थूणायाम् ॥ ५ ॥ गृह्याभ्यो देवताभ्य इति
गृहमध्ये ॥ ६ ॥ धर्माया धर्मायेति द्वारे ॥ ७ ॥ मृत्यव आका-
शायेत्यांकाशे ॥ ८ ॥ अन्तर्गोष्ठायेत्यन्तर्गोष्ठे ॥ ९ ॥ बहि-
र्वैश्रवणायेति बहिः प्राचीम् ॥ १० ॥ विश्वेभ्यो देवे-
भ्य इति वेश्मनि ॥ ११ ॥ इन्द्रायेन्द्रपुरुषेभ्य इति पुरस्तात्
॥ १२ ॥ यमाय यमपुरुषेभ्य इति दक्षिणतः ॥ १३ ॥ वरुणा-
य वरुणपुरुषेभ्य इति पश्चात् ॥ १४ ॥ सोमाय सोमपुरुषे-

२ सोम । ३ धन्वन्तरि । ४ विश्वेदेव । ५ प्रजापति । ६ अग्निस्विष्टकृत । इन
छः देवताओं के लिये (अग्नये स्वाहा) इत्यादि प्रकार छः आहुति हविष्यास
की अग्नि में देवे ॥ २ ॥ अब मृतयज्ञ कहते हैं । (अग्नये नमः । सोमाय नमः)
इत्यादि मन्त्रों से अग्निस्थान यज्ञशाला में उत्तर २ को छः घास घरे (अद्भ्यो-
नमः) से जल भरे सटका के समीप ॥ ३ । ४ ॥ (ओषधिभ्यो नमः) ओष-
धियों के समीप (वनस्पतिभ्यो नमः) बीच के खम्भ के पास (गृह्याभ्यो देव-
ताभ्यो नमः) से घर के बीच ॥ ५ । ६ ॥ (धर्माया धर्माय नमः) से द्वार पर (मृ-
त्यव आकाशाय नमः) से आकाश में बलि फेंके ॥ ७ । ८ ॥ (अन्तर्गोष्ठाय नमः)
से कोठा के भीतर ॥ ९ ॥ (बहिवैश्रवणाय नमः) से घर से बाहर पूर्व में
(विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः) से घर के बीच में ॥ १० । ११ ॥ (इन्द्राय नमः । इ-
न्द्रपुरुषेभ्यो नमः) से घर से पूर्व में (यमाय नमः । यमपुरुषेभ्यो नमः) से घर के द-
क्षिण भाग में एक बलि घरे ॥ १२ । १३ ॥ (वरुणाय नमः । वरुणपुरुषेभ्यो नमः) से घर

भ्यइत्युत्तरतः ॥ १५ ॥ ब्रह्मणे ब्रह्मपुरुषेभ्यइतिमध्ये ॥ १६ ॥ प्राची-
 नापातिकेभ्यः सम्पातिकेभ्य ऋक्षेभ्यो यक्षेभ्यः पिपीलिकाभ्यः
 पिशाचेभ्योऽप्सरोभ्यो गन्धर्वेभ्यो गुह्यकेभ्यः शैलेभ्यः प-
 क्षगेभ्यः ॥ १७ ॥ दिवाचारिभ्यो भूतेभ्यइति दिवा । नक्तंचा-
 रिभ्यो भूतेभ्यइति नक्तम् ॥ १८ ॥ धन्वन्तरये धन्वन्तरित-
 पंथम् ॥ १९ ॥ अग्निः संसृज्य पितृभ्यः स्वधेति शेषं द-
 क्षिणा भूमौ तिनयेत् ॥ २० ॥ पाणीं प्रक्षाल्याचम्यातिथिं
 भोजयित्वाऽवशिष्टस्याश्नीयात् ॥ २१ ॥

इति द्वादशः खण्डः समाप्तः ॥

अर्थात्: षष्ठीकल्पं व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥ शुक्लपक्षस्य पञ्च-

के पश्चिम भाग में (सोमायननः । सोमपुरुषेभ्यो नमः) से घरके उत्तर भाग में
 ॥ १४ ॥ १५ ॥ (ब्रह्मणेनमः । ब्रह्मपुरुषेभ्यो नमः) से घर के मध्यभाग में ॥ १६ ॥
 (आपातिकेभ्योनमः) इत्यादि ग्यारह दाक्यों से ग्यारह बलि भी पूर्व में धरे
 (दिवाचारिभ्यो भूतेभ्योनमः) से दिन में (नक्तं चारिभ्यो भूतेभ्यो नमः)
 से रात में एक २ बलि बीच में धरे (धन्वन्तरये नमः) से एक बलि धन्व-
 न्तरि की वृत्ति के लिये धरे ॥ १८ ॥ १९ ॥ जितना बलि कर्म के लिये अन्न
 लिया था वसं में से शेष वंचे अन्न में किंचित् अन्न निला के अपसव्य दक्षिणा-
 भिमुख हो घर से दक्षिण में (पितृभ्यः स्वधा) कहकर एक बलि भूमि पर
 धरे ॥ २० ॥ फिर यथाविधि अतिथि को भोजन कराके हाथ पांख धोके शेष
 वंचे अन्न को पति पत्नी खावें ॥ २१ ॥ पितरों के लिये जो एक बलि है वही
 पितृयज्ञ कहता है ॥

यह बारहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

सापार्थः—सैकड़ों हजारों गीआदि धन को चाहता हुआ गृहस्थ पत्नी तिथि
 के दिन पक्षीकल्प नामक कर्म को करे उस का व्याख्यान दिखाते हैं ॥ १ ॥
 जिस सहिने में यह कर्म करना इष्ट हो तब शुक्लपक्ष की पञ्चमी को पश्चिम की

म्यां प्रत्यङ्मुखो हविष्यमन्नमश्नीत ॥ २ ॥ अधः शयीत द-
र्भेषु शालिपलालेषु वा प्राक्शिरा ब्रह्मचारी ॥ ३ ॥ श्वोभू-
ते उदित आदित्ये स्नानं पानं भोजनमनुलेपनं सज्जो वासां-
सि न प्रत्याचक्षीत ॥ ४ ॥ यावद्दद्यात्तावदश्नीयात् । यद्यहद-
द्यात्तत्तदश्नीयादन्यत्रामेध्यपातकिभूयोऽभिनिविष्टवर्जम् ॥ ५ ॥
अस्तमित आदित्ये पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा । अथैतै-
र्नामधेयैर्जुहोति-धनदां वसुमीशानां कामदां सर्वकामिनाम् ।
पुण्यां यशस्विनीं देवीं षष्ठीं शक्रजुषस्वमे ॥ नन्दीभूतिश्च लक्ष्मी-
श्च आदित्याचयशस्विनी । सुमनां वाक्चक्षुःसिद्धिश्च षष्ठीमेदि-
शतां धनम् ॥ पुत्रान्पशून्धनधान्यं बहुश्वाजगवेडकम् । म-
नसायत्प्रणीतं च तन्मेदिशतु हव्यभुक् ॥ कामदां रजनीं विश्व-
रूपां षष्ठीमुपवर्त्ततु मे धनम् । सामे कामा कामपत्नी षष्ठीमे-
दिशतां धनम् ॥ आकृतिः प्रकृतिर्वचनी धावनिः पद्मचारिणी
मन्मना भवस्वाहा ॥ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषि-
णीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपहृये श्रियम् ॥ नानापत्रका-
सा देवी पुष्टिश्चातिसरस्वती । अरिं देवीं प्रपद्येयमुपवर्त्तय-

श्रीर मुख करके हविष्यान्न खावे ॥ २ ॥ खटियां कोढ़के नीचे पृथिवी पर दाभ
वा पलाल बिछाके पुर्व को शिर पश्चिम को पंग कर उस दिन सोवे ब्रह्मचारी
रहे ॥ ३ ॥ अगले दिन प्रातःकाले सूर्योदय होने पर स्नान दुग्धपात्रादि भो-
जन चन्दन केशरादि का अनुलेपन पुष्पादि की माला और उत्तम नये वस्त्रों
को ब्रती होने पर भी प्राप्त हों तो त्याग न करे ॥ ४ ॥ जितना तथा जो २
भोज्य पदार्थ प्राप्त हो उसने २ उस २ को खावे पर लहसुन आदि अमध्य न
खावे और जिन का अन्न-धर्मशास्त्र में वर्जित लिखा है उसे भी गलास वा वासे
अन्न को कोढ़कर न खावे ॥ ५ ॥ फिर उस षष्ठी तिथि को सूर्य के अस्त होने
पर दूध में स्थालीपाक प्रकार प्रवित्रासादनादि आधारां यथागपर्यन्त

तुमेधनम् । हिरण्यप्रकारादेविमांवर । आगच्छत्वायुर्यशश्च-
 स्वाहा ॥ अश्वपूर्णांरथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम् । श्रियं
 देवोमुपहृये श्रीर्मादेवी जुषताम् ॥ उपयन्तुमादेवगणस्त्या-
 गांश्च तपसासह । प्रादुर्भूतोऽस्मिराष्टेऽस्मिन् श्रीःश्रद्धां-
 धातुमे ॥ श्रियै स्वाहा ॥ ह्रियै स्वाहा ॥ लक्ष्म्यै स्वाहा ।
 उपलक्ष्म्यै स्वाहा । नन्दायै स्वाहा । हरिद्रायै स्वाहा । षष्ठ्यै
 स्वाहा । समृद्ध्यै स्वाहा । जयायै स्वाहा । कामायै स्वा-
 हेति ॥ ६ ॥ जयप्रभृति समानम् ॥ ७ ॥ षण्मासान्प्रयुञ्जीत
 त्रीन्बोभयतः पक्षान् ॥ ८ ॥ शतसाहस्रसंयोग एकवरो वा ॥ ९ ॥
 गौरनड्वांश्च दक्षिणा ॥ १० ॥

इति त्रयोदशः खण्डः समाप्तः ॥

अथातो विनायकान् व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥ शालकट-

ड्कटश्च कूष्माण्डराजपुत्रश्चोस्मितश्च देवयजनश्चेति ॥ २ ॥

कृत्य पूर्वोक्तरीति से करके (धनदा०) इत्यादि मन्त्रों से स्थालीपाक द्वारा प्रधान
 होन करे ॥ ६ ॥ इस प्रकार वींश २० प्रधानाहुति करके जय होनादि पूर्ववत् करे
 ॥ ७ ॥ छः महिने तक छः बार शुक्लपक्ष की पष्ठी तिथियों में वा तीन महिनों के
 दोनों पाखों में कही पष्ठी तिथियों में छः बार इस कर्म का अनुष्ठान करे ॥ ८ ॥
 इस कर्म का फल सैकड़ों हजारों लाखों धन सुवर्णमुद्रादि वा गो आदि की
 प्राप्ति अथवा किन्हीं व्रतों में श्रेष्ठ पुत्रोत्पत्ति होना आदि है ॥ ९ ॥ इस में
 एक गौ तथा एक बैल आचार्य को दक्षिणा में देवे ॥ १० ॥

यह तेरहवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भावार्थः—अब षष्ठीकल्प कर्म के पश्चात् शालकटंकटादि चार प्रकार के
 विनायक नाम भूत प्रेत विशेष कहाते हैं (विशेषेण नयन्ति प्रापयन्त्यनिष्ठा-
 नीति विनायका भूतविशेषाः) विशेष कर अच्छे कामों में विघ्न पहुंचाने वा-
 ले चतुर्विध भूत विनायक कहाते हैं । विघ्न शांति के लिये जो विनायकों का
 पूजन किया जाता उस कर्म का नाम भी विनायक है ॥ १ । २ ॥ ये शाल क-

एतैरधिगतानामिमानि रूपाणि भवन्ति ॥ ३ ॥ लोष्टं मृ-
 द्दनाति ॥ ४ ॥ वृणानि छिनत्ति ॥ ५ ॥ अङ्गेषु लेखान्
 लिखति ॥ ६ ॥ अपः स्वप्नं पश्यति ॥ ७ ॥ मुण्डान्पश्यति
 ॥ ८ ॥ जटिलान्पश्यति ॥ ९ ॥ काषायवाससः पश्यति ॥ १० ॥
 उष्ट्रान्सूकरान् गर्दभान् दिवाकीर्त्यादीनन्यांश्चाप्रयतान्स्व-
 प्रान्पश्यति ॥ ११ ॥ अन्तरिक्षं क्रामति ॥ १२ ॥ अध्वानं
 व्रजन्मन्यते पृष्ठतो मे कश्चिदनुव्रजति ॥ १३ ॥ एतैः खलु
 विनायकैराविष्टा राजपुत्रा लक्षणवन्तो राज्यं न लभन्ते ॥ १४ ॥
 कन्याः पतिकामा लक्षणवत्यो भर्तृन् न लभन्ते ॥ १५ ॥ स्त्रि-
 यः प्रजाकामा लक्षणवत्यः प्रजां न लभन्ते ॥ १६ ॥ स्त्रीणा-

टंकटादि विनायक जिन मनुष्यों को लगजाते हैं उन के चिह्न निम्न लिखित
 हैं ॥ ३ ॥ मही के डेलों को वह फोड़ता है ॥ ४ ॥ तिनकों को तोड़ता है ॥ ५ ॥
 अपने शरीरांगों पर रेखा खेंचा करता है ॥ ६ ॥ सोते समय विशेष कर ज-
 लाशयों को देखता है ॥ ७ ॥ और सोते में मुँह हुए सब वाल रखाये हुए औ-
 र गेरुआवस्त्रों वाले साधु संन्यासियों को देखता है ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ तथा
 कंट, कुश्रंर (सूकर) गधा, भंगी (चाण्डालों) और ऐसे ही अन्य अपवित्र
 पतित नीच प्राणियों को भी वह भूत ग्रस्त पुरुष स्वप्न में देखता है ॥ ११ ॥ रा-
 त में सोता हुआ शून्य आकाश में सहता है ॥ १२ ॥ मार्ग में चलता हुआ मा-
 नता है कि मेरे पीछे कोई चला आता है ॥ १३ ॥ इत्यादि विनायकों के चिह्न
 हैं और आगे कहे शुभफलों का नाश भी विनायकों का काम है । इन शाल
 कंटकटादि विनायकों से घेरे हुए उत्तम आचार्यों वाले भी राजकुमार राज-
 गद्दी को नहीं पांते उन के राज्य लाभ में अनेक विघ्न हुआ करते हैं ॥ १४ ॥
 उत्तम सती पतिव्रताओं के लक्ष्यों वाली पतियों की कामना रखने वालों क-
 न्या पतियों को प्राप्त नहीं होतीं ॥ १५ ॥ सती पतिव्रतादि शुभ लक्ष्यों से यु-
 क्त स्त्रियां सन्तानों को चाहती हुई भी पुत्रादि को प्राप्त नहीं होतीं ॥ १६ ॥

आचारवतीनामपत्यानि स्मियन्ते ॥ १७ ॥ ओत्रियोऽध्याप-
 कआचार्यत्वं न प्राप्नोति ॥ १८ ॥ अध्येतृणामध्ययने महा-
 विघ्नानि भवन्ति ॥ १९ ॥ वणिजां वणिक्पथो विनश्यति
 ॥ २० ॥ कृषिकराणां कृषिरल्पफला भवति ॥ २१ ॥ तेषां
 प्रायश्चित्तम् ॥ २२ ॥ मृगास्त्रकुलायमृत्तिकारोचनागुग्गुलाः
 ॥ २३ ॥ चतुर्भ्यः प्रसवणेभ्यश्चतुर्दकुम्भानव्यङ्गानाहरेत् ॥ २४ ॥
 सर्वगन्धसर्वरससर्वौषधोः सर्वरत्नानि चोपकल्प्य प्रतिसर-
 दधिसधुवृत्तमिति ॥ २५ ॥ एतान्संभारान्संसृज्य-ऋषभचर्मा
 रोह्य-अथैनं स्नपयन्ति-सहस्राक्षंशतधारमृषिभिःपावनंकृ-
 तम् । ताभिश्चाभिषिञ्चामि पावमानी पुनन्तुत्वा ॥ अग्निना-
 दत्ता । इन्द्रेण दत्ताः । सोमेन दत्ता । वरुणेन दत्ता । वायुना दत्ता ।
 विष्णुना दत्ता । बृहस्पतिना दत्ता । विश्वेदेवैदत्ता सर्वेदेवैदत्ता

धर्मानुकूल शूद्र आचारवाली स्त्रियों के भी छोटे २ सन्तान नरकाते हैं ॥ १७ ॥
 वेदवेदाङ्ग पढ़ा विद्वान् अध्यापक हो जाने पर भी आचार्य पदवी को नहीं
 प्राप्त हो ता (नचाचार्योः सूत्राणि कृत्वा निवर्त्तयन्ति) जिन के बनाये सूत्रा-
 दि फिर लौटे न जाय वे आचार्य कहाते हैं ॥ १८ ॥ विनायकों से आक्रान्त
 विद्यार्थियों के विद्याध्ययन में बड़े २ विघ्न होते हैं ॥ १९ ॥ विनायकों से
 घरे वैश्यों का व्यापार नष्ट ऋष्ट हो जाता है ॥ २० ॥ विनायकयुक्त किसानों
 की खेती में बहुत कम पैदायश होने लगती है ॥ २१ ॥ इत्यादि विनायक ज-
 न्य विघ्नों की शान्ति के लिये प्रायश्चित्त करना चाहिये ॥ २२ ॥ घए विना-
 यकों से यत्त पुख, बन के सुगों ने खोद कर बनाये विलों की नही, रेली
 और गुगुल ॥ २३ ॥ बड़ो नदियों में से जिसले चार सोताओं से जो टेढ़े बक्र
 बज्जुचेन हों ऐसे चित्र विचित्र चार घड़ों द्वारा (एक २ सोता से एक २ घड़ाऐसे)
 चार घड़े गल लावे ॥ २४ ॥ केशरकस्तूरी आदि सब सुगन्धित वस्तु, मिष्टादि लहो
 रस, ब्राह्मी आदि सब उत्तम ओषधि और पद्मरागादि सब रत्न, हाथ आदि
 में मङ्गलार्थ बांधने को रङ्गा हुआ सूत (कलावा) दही शहद इन सब चीजों

ओषधयः आपो वरुणसंमिताः । ताभिष्ट्वाभिषिञ्चामि पाव-
 मानीः पुनस्तुत्वेति सर्वत्रानुषजति ॥ यत्ते केशेषु दीर्घाय सीम-
 न्तेयच्च मूर्द्धनि । ललाटे कर्णयो रक्ष्णोरापस्तद्गुह्यन्तु ते सदा ॥
 भगं ते वरुणो राजा भगं सूर्यो बृहस्पतिः । भगमिन्द्रश्च वायुश्च
 भगं सप्तर्षयो ददुः ॥ इति ॥ २६ ॥ अधिस्नातस्य निशायां सद्यः
 पीडितसर्षपतैलमौदुम्बरेण सुवेण मूर्द्धनि चतस्र आहुतीर्जु-
 होति ॥ ओं शालकटङ्कटाय स्वाहा ॥ कूष्माण्डराजपुत्राय
 स्वाहा ॥ उस्मिताय स्वाहा ॥ देवयजनाय स्वाहेति ॥ २७ ॥ अत
 ऊर्ध्वं ग्रामचतुष्पथे नगरचतुष्पथे निगमचतुष्पथे वा सर्व-
 तो मुखान्दर्भानास्तीर्य नवैशूर्पे बलिमुपहरति-फलीकृतांस्त-
 ण्डुलान् फलीकृतांस्तण्डुलानामं मांसं पक्षं मांसमामान्मत्स्या-

को एकत्र करके उन चार चट्टों में डाल कर सिला देवे । फिर विनायक नामक
 भूतपूज्य पुरुष को (जो नपुंसक वर्धिया न किया गया हो ऐसे पुरुष) घैल के
 घर्म पर बैठा के उन चारों चट्टों से जल से २ कर कोई उस का आचार्य पु-
 रोहित बिद्वान् (सहस्राक्षं शत०) इत्यादि मन्त्रों से स्नान करावे उस के शिर
 पर प्रत्येक मन्त्र के साथ जल धारा छोड़ता जावे । (अग्निनादत्ता । वायु-
 नादत्ता) इत्यादि प्रत्येक वाक्यके साथ (ओषधय आपो०) से लेके (पावमानीः
 पुनस्तुत्वा) पर्यन्त मन्त्र का भाग जोड़ने के मन्त्र पद २ स्नान करावे ॥ २५ ॥ २६ ॥
 फिर स्नान करावे उस पुरुष को चरिंदार शुद्ध वस्त्र धारण कराके बैठाने उसी
 दिन रातको तत्काल पीड़न करके निकाला सरसोंका तेल गुलर वृक्षकी लकड़ी
 से बने झुवा में से २ कर (ओं शालकट०) इत्यादि चार मन्त्रोंसे उसके मूर्द्धापर
 चार आहुति उस तेलकी छोड़े ॥ २७ ॥ इसके पश्चात् ग्राम नगर वा निगम नाम वन
 के चौराहे पर सब चारों दिशा के मार्गों की ओर अग्रभाग कर २ कुश बिछावे
 उन कुशों पर पश्चिम की अग्रभाग करके एक नया सूप रखे उस पर नैवेद्य
 वत्सा आदि का बलिदान घर के निम्न लिखित मूल फल पर्यन्त वस्तु में

नपक्वान्मत्स्यानामानपूपान्पक्वानपूपान् पिष्टान्गन्धानपि-
 ष्टान्गन्धान्गन्धपानं मधुपानं मैरेयपानं सुरापानं मुक्तं मा-
 ल्यं ग्रथितं माल्यं रक्तं माल्यं शुक्लं माल्यं रक्तपीतशुक्लकृष्ण-
 नीलहरितचित्रवासांसि मापकल्माषमूलफलमिति ॥२८॥ अथ
 देवानामावाहनम् । द्विमुखः श्येनो वको यक्षः कल्हो भीरु-
 र्विनायकः कूष्माण्डराजपुत्रो यज्ञाविक्षेपी कुलङ्गापमारी
 यूपकेशी सूपरक्रीडो हैमवतो जम्भको विरूपाक्षो लोहि-
 ताक्षो वैश्रवणो महासेनो महादेवो महाराज इति ॥ एते
 मे देवाः प्रीयन्तां प्रीता मा प्रीणयन्तु । तृप्ता मां तर्पय-
 न्त्विति ॥ २९ ॥ अधिष्ठितेऽर्घरात्राचार्यो गृहानुपतिष्ठते ।
 भगवति भगं मे देहि ॥ वर्णवति वर्णं मे देहि । रूपवति
 रूपं मे देहि । तेजस्विनि तेजो मे देहि । यशस्विनि यशो मे
 देहि । पुत्रवति पुत्रान्मे देहि । सर्ववति सर्वाङ्गामान्मे दे-

समर्पितवारे । फटके चावल, भूरी सहित विन फटके चावल, कज्जानांस, पकानांस, कक्षीमखली, पक्षीमखली, कच्चे पुआ, पके पुआ, पिसे हुये केशरादि सुगन्ध, विन पिसे सुगन्ध, सुगन्धघोराजल, मधुपान-तहुआका-मैरेय-गुड़ कानद्य और चुरा आटा का मद्य, विन गूथी नाला, लाल और सफेद नाला, लाल पीला सफेद काला नीला और हराइन सब रङ्गोंसे चित्रित वस्त्र, सड़द, कुत्तयी, मूली आदि की जड़ और नीबू आदि फल इन सबका बलि सूपमें उपहार धरे ॥२८॥ बलि भेंट करके देवताओं का आवाहन करे । अर्थात् द्विमुख आदि वींश देवताओं के संयु-
 च्यन्त नाम बोले सब के साथ (एहि) क्रिया लगावे जैसे (द्विमुखएहि ! श्येन एहि) इत्यादि । और (एतेमेदेवाः) सब के आवाहन के अन्त में कहे ॥२९॥ फिर ठीक आधीरात होजाने पर आचार्य चौराहे से घर पर जाकर गृहाधि-
 ष्ठात्री अम्बिका देवता का (भगवति भगं मे०) इत्यादि सन्त्रों से उपस्थान करे कोई लोग इसी अर्द्धरात्रि के समय (चत्वरपूजा) चौतरे की पूजा करना भी

हीति ॥३०॥ अतज्जर्ध्वमुदितआदित्ये विमले मुहूर्त्ते सूर्यपूजा
पूर्वकमर्घ्यदानम् । उपस्थानं च । नमस्ते अस्तुभगवन् शत-
रश्मेतमोनुद । जहिमेदेवदौर्भाग्यं सौभाग्येनसांसंयोजयस्व
॥ इति-॥३१॥ अथ ब्राह्मणतर्पणम् ।३२। ऋषभो दक्षिणा ।३३।

इति चतुर्दशः खण्डः समाप्तः ॥

यदि दुःस्वप्नं पश्येद् व्याहृतिभिस्तिलान् हुत्वा दिश
उपतिष्ठेत्---बोधश्चमाप्रतिबोधश्च पुरस्ताद्गोपायताम् ।
अंस्वप्नश्चमानवद्राणश्च दक्षिणतो गोपायताम् । गोपायमा-
नंचमारक्षमाणंच पश्चाद्गोपायताम् । जागृविश्चमारुन्ध-
तीचोत्तरतो गोपायताम् । विष्णुश्चमापृथिवीचनागाश्चा-
धस्ताद्गोपायताम् । बृहस्पतिश्चमाविश्वेचमेदेवाद्यौश्चो-
परिष्ठाद्गोपायताम् ।१। एवं यस्मिंश्चोत्पन्नेऽनर्थाऽशङ्केत

इसीकर्म के साथ कहते हैं ॥ ३० ॥ इस के उपरान्त सूर्य का उदय होने पर
अर्थात् ठीक २ प्रकाश हो जाने पर सूर्यनारायण का मन से ध्यान उपासना
स्तुति आदिरूप पूजा करके अर्घ्य देवे और (नमस्ते अस्तु) मन्त्र द्वारा सूर्य-
देव का उपस्थान करे ॥ ३१ ॥ फून दूर्वा तथा सरसों सहित जल की अंगुली
भर बार विनायक के लिये अर्घ्य देकर अम्बिका और गणपति जी का पूजन
करे । फिर ब्राह्मणों को भोजन करावे और आचार्य को एक बैल दक्षिणा में
देवे ॥ ३२ । ३३ ॥ यह चौदहवां खण्ड समाप्त हुआ ॥

यदि अनिष्ट सूचक जटं गधादि पर चढ़ना आदि दुःस्वप्न दीखे तो जा-
गने पर आचारादि सामान्य विधि के पश्चात् व्यक्त और समस्त चार व्या-
हृतियों से घृत मिलाये तिलों का होम करके (बोधश्चमा) इत्यादि छः मन्त्रों
से क्रमशः पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर नीचे तथा ऊपर की छः दिशाओं के दे-
वताओं का उपस्थान उस २ ओर मुख करके करे ॥१॥ इसी प्रकार लाल वस्त्र
धारण की हुई स्त्री से स्वप्न में समागम आदि होना जागते में बिना शिर के

१२। व्याहृतिभिस्तिलान् हुत्वा तपः प्रतिपद्येत द्वादशरात्रं
षड्शत्रं त्रिरात्रमेकरात्रं वा । ३ । यदि समुत्पातं मन्येत
तद्वा । ४ । यदि पर्वसु मार्त्तिकं भिद्येत-पार्थिवमसिपृथिवी-
हं ह स्वयोनिं गच्छस्वाहेत्यप्सु प्रहरेत् । ५ । यद्यर्चा दह्येद्वा
नश्येद्वा प्रपतेद्वा प्रभज्येद्वा प्रहसेद्वा प्रचलेद्वा । स्थालया वा
स्थालीमासिच्य दक्षिणोत्तरा वा स्थाली भिद्येतोत्तरावोप-
लाशे नियम्य । द्वारवंशो वा स्फुटेत् । गौर्वा गां धयेत् ।
स्त्री वा स्त्रियमाहन्यात् । कर्त्तृसंसर्गे हलसंसर्गे मुसलसं-
सर्गे मुसलप्रपतने मुसलं वाऽवशीर्येतान्यस्मिंश्चाद्भुत-
एताभिर्जुहुयात् । स्वस्तिनइन्द्रोवृद्धश्रवाःस्वस्तिनःपूषा-

पुरुष की छाया दीख पड़ना आदि अनिष्ट सूचक निमित्तों की शृङ्खा ही तो ॥२॥
घी मिले तिलों से व्याहृतियों द्वारा होन करके वारह, छः, तीन वा एक दिन
अनिष्ट सूचना के अनुसार (अनिष्ट शकुन का न्यूनाधिक बल देख कर) तप
करने में लग जावे ॥ ३ ॥ यदि कोई सम्यक् बड़ा उत्पात अनिष्ट माने जैसे
भयंकर बापु चले उस में कंकड़ी वर्षे वृक्षोंमें से रुधिर वर्षे इत्यादि हो तो
पूर्वोक्त तिल द्वारा व्याहृति होन दिग्देवोपस्थान सहित करे अथवा वारह
दिन आदि के तप के साथ तिल होन करे ॥ ४ ॥ यदि अमावास्यादि
पर्व दिनों में सही की भीत आदि अकारण फट जावे तो फूटे घड़े का
खप्पर आदि (पार्थिवमसि०) सन्त्र से जल में फेंक देवे ॥ ५ ॥ अथवा
यदि शिव विष्णु आदि देवताओं की सुवर्ण चांदी पीतल पत्थर का-
ष्ठादि की बनी प्रतिमा जलने लगे वा स्वयं लुप्त होजावे वा फूट जावे वा
अपने आसन से पृथक् गिर जावे वा बिना ही कारण टुकड़े २ हो जावे वा
चेतन सनुष्य के लुप्त हंगने लगे वा जहां धरी हो वहां से अन्यत्र चली जावे
एक बटलोईका जल दूसरीमें चला जावे और फिर उसीमें आजावे और उन दो
नों में से दहिनी वा बायीं बटलोई आदि पात्र स्वयं भिड़कर टूट जावे अथ-
वा बायीं बटलोई एक ही बिना कारण फूट जावे । द्वारका खरूम वा सड़ल

विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्ताह्व्योअरिष्टनेमिः स्वस्तिनोवृहस्प-
तिर्दधातु ॥ स्वस्तिनोमिमीतामश्विनाभगः स्वस्तिदेव्य-
दितिरनर्वणः । स्वस्तिपूषाअसुरोदधातुनः स्वस्तिद्यावापृ-
थिवीसुचेतुना ॥ स्वस्तयेवायुमुपव्रवामहे सोमस्वस्तिभुवन-
स्ययस्पतिः । वृहस्पतिसंवर्गणस्वस्तये स्वस्तयआदित्यासो-
मदःतुनः ॥ विश्वेदेवानोअद्यास्वस्तये वैश्वानरोवसुरग्निः-
स्वस्तये । देवाअवन्तवृभवः स्वस्तये स्वस्तिनोरुद्रः पात्वंहसः ।
स्वस्तिनः पथ्यासुधन्वसु स्वस्त्यप्सुव्रजनेस्वदंतः । स्वस्ति-
नः पथ्याकृतेपुयोनिपु स्वस्तिरायेमरुतोदधातुनः ॥ त्रातार-
मिन्द्रं-मातेअस्यां । विनइन्द्र । मृगोनभीमः । तज्जंयोरा-
वृणीमहइतिदशाहुतयः । ६ । जयप्रभृति समानम् । ७ ।

इति पञ्चदशः खण्डः समाप्तः ॥

सर्पभ्यो विभ्यत् श्रावण्यां तूष्णीं भौममेककपालं श्र-
पयित्वाक्षतसकून् पिष्ट्वा स्वकृतहरिणेदर्भानास्तीर्थ्याच्युता-

बिना कारण टूट जावे अथवा उस में अड़भुर निकल आवें । अथवा गौ की
गौ चोंखे (गौ का दूध गौ पीवे) वा कोई स्त्री अन्य स्त्री को पीटे सारे वा पर-
स्पर स्त्रियां बाहु युद्ध करें । खेतादिकाटने के समय दो दात्र (हंसिया वा दरांत)
अकारण मिड़जावें कई हल खेत में चलते हों वे अकस्मात् मिड़ जावें । अ-
थवा चानादि कूटने में दो मूल मिड़जावें वा दात्रादि मिड़ के अकस्मात्
टूट जावें । ऐसे ही अन्य कोई राहुदर्शनादि आश्चर्यजनक शकुन होने पर
आधारादि सामान्यविधि के पश्चात् (स्वस्तिनइन्द्रो०) इत्यादि पांच और
(त्रातारमिन्द्रं०) इत्यादि पांच इन दश मन्त्रों से धी की दश प्रधानाहुति
करे ॥ ६ ॥ पश्चात् जयहोमादि यहां भी पूर्ववत् जानो ॥ ७ ॥ यह पन्द्रहवां
खण्ड समाप्त हुआ ॥

भाषार्थः—सांपों से डरता हुआ मनुष्य श्रावणी घौलसासी के दिन मूत्रि-
पर तूष्णीं बिना मन्त्र पढ़े एक कपालका पुरोडाश पका कर (परन्तु होम प-

य ध्रुवाय भौमाय स्वाहेति जुहोति । १॥ समीची नामासीति
पर्यायैरुपतिष्ठते प्रतिदिशं द्वाभ्यां मध्ये ॥ २॥ अक्षतसक्तू-
नां सर्पबलिं हरति । ईशानायेत्येके । सर्पोसि सर्पाणामधिप-
तिस्त्वयि सर्वे सर्पाः । बलिहारोऽस्तु सर्पाणां माक्षिषुर्मा रीरि-
षुर्मा हिंसिषुर्मा दाहक्षुः सर्पाः ॥ मा नो अग्ने विसृजो अ-
घायाविष्यवे रिपवे दुच्छुनायै । मा दत्त्वते दशते मादते नो
मा रोषते सहसावन्परादाः ॥ सर्पोसि सर्पाणामधिपतिरन्येन
मनुष्यांस्त्रायसेऽपूपेन सर्पान् । त्वयि सन्तं मयि सन्तं मा-
क्षिषुर्मा रीरिषुर्मा हिंसिषुर्मा दाहक्षुः सर्पाः ॥ नमो अस्तु
सर्पेभ्य इति तिसृभिश्च । ३॥ ध्रुवामुं ते परिददामीति सर्वा-
मात्यान्नामग्राहमात्मानं च ॥ ४॥ एतेन धर्मेण चतुरो मा-

र्यन्त श्रौत में कही पुरोडाश की कार्यवाही यहां न की जाय) स्वयं बनाये ऊ-
पर भूमिस्थ वेद्याकारस्थगिहल पर दर्भ बिछा के उस पर अग्निस्थापन प्रवृत्तनादि
आचम्यभागान्त करके प्रधान होमके स्थान में (अच्युताय०) इत्यादि मन्त्र पढ़के
पुरोडाश का होम कर देवे । और विन कुटे भूसी सहित भुंजे जी पीस कर ॥ १॥
(समीचीनामासि०) इन पर्यायवाची मन्त्रों से सब पूर्वोदि दिशाओं में मुख
कर २ उपस्थान करे और दो मन्त्रों को पढ़ २ के बीच में ऊपर नीचे की दि-
शा का उपस्थान करे ॥ २॥ फिर उन पीसे हुये सत्तुओं की क बलि
(सर्पोसि०) इत्यादि तीन और (नमोऽस्तुसर्पे०) इत्यादि तीन मन्त्रों से
देवे । जिस जगह बलि देवे वहां पहिले जलसेचन करके ऊपर से बलि
धर के फिर जल सेचन करे । कोई लोग सूप में बलि धरना कहते हैं उन के
मतानुसार सूप में बलियों के नीचे ऊपर जल सेचन होना चाहिये ॥ ३॥
फिर (ध्रुव ! यज्ञदत्तं ते परिददामि) इत्यादि प्रकार अपने सब स्त्री पुत्रादि
को देवता के आधीन रखार्य समर्पित करे और अन्त में यज्ञदत्त नाम के
स्थान में अपना नाम लेकर अपने को भी रखार्य देवता के आधीन करे ॥ ४॥

सान्सर्पबलिं हृत्वा विरमति ॥ तूष्णीमपि शूद्रा प्रक्षालित
पाणिः ॥ इति षोडशः खण्डः समाप्तः ॥

अयूधिके भयार्त्ते कपोते गृहान्प्रविष्टे तस्याग्नौ पदं
दृश्येत दधनि सक्तुषु घृते वा । देवाः कपोतइति प्रत्यृचं ज-
पेज्जुहुयाद्वा । देवाः कपोत इषितो यदिच्छन्दतो निऋत्या
इदमाजगाम । तस्मा अर्चाम कृण्वाम निऋतिं शंनो अस्तु
द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ शिवः कपोत इषितो नो अस्त्वनागा
देवा शक्नुनो गृहेषु । अग्निर्हि विप्रो जुषतां हविर्नः परिहेतिः
पक्षिणी नो वृणक्तु ॥ हेतिः पक्षिणी न दमात्यस्मानाद्द्रुगं
पदं कृणुते अग्निधाने । शंनोगोभ्यश्च पुरुषेभ्यश्चास्तु मानो
हिंसीदिह देवाः कपोतः ॥ यदुलूको वदति मोघमेतद्यत्क-
पोतः पदमग्नौ कृणोति । यस्य दूतः प्रहितएषएतत्तस्मै यमाय
नमोअस्तु मृत्यवे ॥ ऋचा कपोतं नुदत प्रणोदमिषं मदन्तः
परिगां नयध्वम् । संथोपयन्तो दुरितानि विश्वा हि त्वा
नऊर्जं प्रपतात्पतिष्ठः ॥ इति । १ । पदमादाय दक्षिणा प्र-

इसी प्रकार भादों द्वार कार्तिक और मार्गशीर्ष अगहन इन चार महिने तक
नित्य सर्प बलि देकर विराम करे ॥५॥ यदि किसी ब्राह्मणादि द्विज के यहाँ
शूद्रा स्त्री हो तो वह हाथ पांव धोके बिना नन्त्र तूष्णीं पूर्वोक्त सर्पबलि करने
करे ॥६॥ यह सोलहवां खण्ड पूरा हुआ ॥

भाषार्थः—जो अपने कुण्ड में से पृथक् बिछुरि गया हो श्येनादि हिंसक
पक्षियों से डर गया हो ऐसा कबूतर अकस्मात् घर में आगावे उस कबूतर के
मग का चिह्न अग्निशाला में दही वा दूध दही सठा के पात्र में सत्तुओं में वा
घी में इत्यादि में दीख पड़े तो (देवाः कपोतः) इत्यादि पांच ऋचाओं का जप
करे वा सामान्यविधि के सहित इन पांच नन्त्रों से प्रधान होम घृत का करे ॥१॥

त्यगृह्रन्ति । २ । सहाधिकरणैर्यन्ति । ३ । स्वकृतद्विरेण पदं
न्यस्याध्यधि । ४ । धाम्नोधान्नइति तिसृभिः परोगोष्ठं मार्ज-
यन्ते । ५ । अनपेक्षमाणाः प्रत्यायन्ति । ६ । अग्न आयूपिपवसे ।
अग्निर्ऋपिः । अग्ने पवस्वेति प्रत्येत्य जपन्ति ॥ ७ ॥

इति सप्तदशः खण्डः समाप्तः ॥

पाडाहुतं प्रतिपदि प्रतिपदि पुत्रकामः । १ । पयसि स्यालीपा-
कं श्रपयित्वा तस्य जुहोति । ब्रह्मणाग्निः संविदानो रक्षो-
हा बोधतामितः । अमीवा यस्ते गर्भं दुर्गामा योनिमाशये ॥
यस्ते गर्भममीवा दुर्गामा योनिमाशये । अग्निष्टं ब्रह्मणा
सह निष्क्रव्यादमनीनशव् : यस्ते हन्ति पतयन्तं निपत्सुं

जिस वस्तु में कबूतर के पग का चिह्न पड़ा हो उस चिह्नित वस्तु को लेकर
नैऋत दक्षिण दिशा में (पु० २ खंड १ सू० ८ आदि में कहे अनुचार) लेजावे
॥२॥ जिस वस्तु में कबूतर का पग पड़ा हो उस २ को वर्त्तन सहित लेकर
नैऋत दक्षिण दिशास्थ जंगल में जावे ॥ ३ ॥ वहां स्वाभाविक ऊपर भूमि में
ऊपर ऊपर पग के चिह्न युक्त वस्तु को तथा अन्य वर्त्तनादि धर देवे ॥ ४ ॥
फिर (धाम्नोधान्न) इत्यादि तीन ऋचाओं से द्वेष करने योग्य शत्रु को
स्यान का नाजन करे अर्थात् शत्रु के घर के चद्वेश से नाजन करे ॥ ५ ॥ फिर
पीछे को न देखते हुए वहां से घर का लौट आवे ॥६॥ तदनन्तर घर में आकर
शध्वर्यु ब्रह्मा और यजमान तीनों (अग्न्यायूपि०) इत्यादि तीन ऋचाओं
का जप करे ॥७॥ यह चत्रहका खण्ड पूरा हुआ ॥

सापार्थः—जिस को पुत्र न होते हों और उस को पुत्र की विशेष चाहना हो
तो प्रत्येक नहिने की दोनों प्रतिपदा के दिन निम्न रीति से पाडाहुत कर्त्त करे ॥१॥
पूर्वाक्त प्रकार दूध में स्यालीपाक पका कर और ठीक २ सामान्य विधि आ-
धारावधभाग पर्यन्त करके (ब्रह्मणाग्निः) इत्यादि छः ऋचाओं से स्या-
लीपाक की छः आहुति एक उपस्तार दो अवदान और एक अभिधारण कर

यः सरीसृपम् । जातं यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि ।
 यस्त्वा स्वप्नेन तप्तसा मोहयित्वा निपद्यते । प्रजां यस्ते
 जिघांसति तमितो नाशयामसि ॥ यस्त्वा भ्राता पतिर्भूत्वा
 जारोभूत्वानिपद्यते । प्रजां यस्ते जिघांसति तमितो नाशयाम-
 सि ॥ ये ते घ्नन्त्यप्सरसो गन्धर्वा गोष्ठाश्च ये । क्रव्यादं सुरदेविनं
 तमितो नाशयामसि ॥ यस्त ऊरू विहरत्यन्तरा दंपती शये ।
 योनिं यो अन्तरोरेदि तमितो नाशयामसि ॥ अभिन्नाण्डा
 वृद्धगर्भा अरिष्टा जीवसूवरी । विजायतां प्रजायतामियं
 भवतु तोकिनी ॥ विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिं-
 शतु । आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते ॥ गर्भं
 धेहि सिनीवलि गर्भं धेहि सरस्वति । गर्भं ते अश्विनौ
 देवावाधतां पुष्करस्रजा ॥ हिरण्ययी अरणीयं निर्मन्थतो
 अश्विनौ । तं ते गर्भं हवामहे दशमे मासि सूतवे ॥ परं
 मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात् । चक्षुः
 षमते शण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरा-
 न् ॥ इति द्वादश गर्भवेदिन्यः । षडाद्याः स्थालीपाकस्य ।
 षडुत्तरा आज्यस्य । २ । जयप्रभृति समानम् । ३ ।

नैजमेषं स्थालीपाकं श्रपयित्वा यथा षाडाहुतम् । नैजमेष
 परापत सुपुत्रः पुनरापत । अस्यै मे पुत्रकामायै पुनराधेहि

चतुरवत्त वा पञ्चावत्त की खुच् द्वारा करे और (यस्त ऊरू) इत्यादि कः
 आहुति घी से करे ये बारह प्रधान आहुति गर्भ को प्राप्त करने वाली हैं ॥ २ । ३ ॥
 और जय होमादि सामन्य कृत्य यहां भी पूर्ववत् करे ॥ ३ ॥
 यदि पूर्वोक्त काम की एक वर्ष तक प्रत्येक प्रतिपदा के दिन करने पर भी

यः पुमान् ॥ यथेयं पृथिवी मह्युत्ताना गर्भमादधे । एवं तं
गर्भमाधेहि दशमे मासि सूतवे ॥ विष्णोः श्रेष्ठेन रूपेणा-
स्यां नार्यां गवीन्याम् । पुमांसं पुत्रमाधेहि दशमे मासि
सूतवे ॥ ४ ॥ इत्यष्टादशः खण्डः समाप्तः ॥

पाकयज्ञान्समासाद्य एकाज्यानेकवर्हिषः ।

एकं स्विष्टकृतं कुर्यान्नाना सत्यपि दैवते ॥

नाना सत्यपि दैवतइति ॥ इति मैत्रायणीयमानवगृ-

ह्यसूत्रे द्वितीयः पुरुषाख्यो भागः समाप्तः ॥ २ ॥ इति

मानवगृह्यसूत्रं समाप्तम् ॥

पुत्र उत्पन्न न हो तो दूध वा जल में नैऋत देवता के उद्देश से स्थाली पाक
पकाकर सामान्य विधि के साथ प्रत्येक प्रतिपदा के दिन बाड़ाहुत कर्म के
तुल्य (नैऋतपरा०) इत्यादि तीन मन्त्रों से स्थालीपाक की तीन आहुति
दिया करे ॥ ४ ॥ यह अठारहवां खण्ड पूरा हुआ-

जिन पाक यज्ञों में प्रधान देवता अनेक हों उनमें भी एक ही घी रखते
एक पर्त कुश विद्धावे और सब की एक ही स्विष्टकृत आहुति करे । किन्तु
कई देवताओं के लिये इन कामों को पृथक् २ न करे । अन्तिमवाक्य को ग्रन्थ स-
माप्ति दिखाने के लिये द्विवचन किया है । यह परिभाषा सूत्र सर्वत्र के लिये है ॥

इति श्री भीमसेनशर्मानिमितायां मानवगृह्यसूत्रस्यागरीभाषावृत्तौ

द्वितीयः पुरुषः समाप्तः समाप्तश्चायं ग्रन्थः ॥



अथसनातनधर्मपुस्तकालयस्यसूचीपत्रम् ॥

१-पाणिनीय अष्टाध्यायीसंस्कृतभाषा वृत्ति सौदाहरण २)	२४ सत्योपदेश भजन ॥
२-ब्राह्मणसर्वस्वमासिकपत्र १ भाग ॥॥ प्रा०च. मासिकपत्र २ भाग ॥॥	२५ शुक्लयजुर्वेदी रुद्री ॥
गणरत्नमहोदधि (व्याकरण गणपाठ- श्लोकवद्व्याख्या सहित १)	२६ पारस्कर गृह्य सूत्र हरिहर भाष्य सहित ॥॥
दशप्रयोगमासपटुति भाषाटीका ॥	२७ प्रबुधतन्त्र भाषाटीका २)
६ दृष्टिसंग्रह पटुति भा०टी० १)	२८ विनय पत्रिका तुलसीदासकृत ॥
७स्मार्तकर्म पटुति भाषाटीका १)	२९ सामुद्रिक भाषाटीका १)
८ उपनयन पटुति भाषाटीका १)	३० जातकालंकारज्योतिषभाषाटीका ॥
९ गर्भाधानादि नवसंस्कार पटुति भाषाटीका ॥	३१ कर्मविपाक भाषाटीका १)
१० त्रिकाश सन्ध्या भाषाटीका -)	३२ सारस्वत मूल ॥
११ कातीयतर्पण भाषाटीका -)	३३ दुर्गासप्तशतीपाकिटबुक(ताबीज) ॥
१२ शिवस्तोत्र भा० टी० ॥	३४ भगवद्गीता (ताबीज) ॥॥
१३ हरिस्तोत्र भा० टी० ॥	३५ कहावत कल्पद्रुम ॥
१४ भर्तृहरितीनों शतक भा०टीका ॥	३६ मन्दारसाख्यान भाषा ॥
१५ भागवतसूत्र भा० टी० ॥	३७ श्री बुधोधिनी १)
१६ आपस्तम्ब गृह्यसूत्र १)	३८ भक्तमालनाभाजीकृत सटीक १)
१७ दयानन्दतिसिर भास्कर ३)	३९ प्रभाती संग्रह ॥
१८ चर्याप्रेमकाश समीक्षा ॥	४० तुलसीदासकृत रामायण गुटका १)
(स० प्र० की १५० अष्टाङ्गि)	४१ " " रत्न कागज ॥॥
१९ विधवा विवाह निराकरण द्विती- य भाग -)	४२ शिवमहिम्नस्तोत्र मूल छोटा -)
२० मुक्ति प्रकाश भाषा (दयानन्दीय- मुक्ति खण्डन) -)	४३ चर्पटपञ्जरीस्तोत्र ॥
२१ दयानन्द लीला भाषा में ॥	४४ शिव सहस्र नाम मूल ॥
२२ भजनबीसा ॥	४५ विष्णुसहस्रनामगुटकामूल ॥॥
२३ दयानन्द हृदय ॥	४६ दृष्टस्तोत्रज्ञाकर गुटका ॥
	४७ दुर्गासप्तशती छोटा गुटका ॥
	४८ दुर्गासप्तशती भा०टी० ॥॥
	४९ माधवनिदान (वैद्यक)भा०टी० १॥
	५० अमरकोश मूल छोटा १)
	५१ अमरकोश भाषाटीका १॥
	५२ अभिमन्युनाटक ॥॥

सूचीपत्र ॥

५३ द्रौपदी वस्त्र हरणनाटक	॥)	७२ धातुरूपावलीलघुचातुपाठसहितः	
५४ प्रलहाद नाटक	॥=)	७३ शार्यसनाजकाभ्रादसनवीनरूपाहे	
५५ सौरध्वज नाटक	॥)	७४ सिद्धान्त कौमुदी पंचपाठी स० २)	
५६ रत्नभाशुक संवाद	=)	७५ सिद्धान्त कौमुदीतत्वबोधिनी टीका सहित	
५७ गङ्गालहरी भा० टी०	१)	७६ लघुकौमुदीटिप्पणीसहितछोटी	
५८ रघुवंशमल्लिकत टीका सहित	१॥)	७७ साध्यन्दिनीयाह्निक	१॥)
५९ भोजप्रबन्धमूल	॥=)	७८ पार्वणश्राद्धपद्धति भा० टी०	१)
६० धनुर्वेद संहिता भा० टी०	॥=)	७९ दशकर्म पद्धति	॥=)
६१ होडाचक्र (ज्योतिष)	-)	८० हरिश्चन्द्रोपाख्यान भा० टी०	॥=)
६२ जैमिनीसूत्रव्योतिषसटीक ४ अध्याय	॥=)	८१ चत्पनारायण कथा	=)
६३ श्रीघ्नबोध भा० टी०	१-)	८२ मनुस्मृति भाषाटीका	२)
६४ लघुपाराशरी भा० टी०	॥=)	८३ वाल्मिकीयरामायण सटीक	८)
६५ बालबोध ज्योतिष	=)	८४ श्रीमद्भागवतसटीकचूणिकासहितः	
६६ ज्योतिषसार भा० टी०	१)	८५ श्रीसद्भागवत गुटका	१॥)
६७ वर्षदीपकपञ्चमार्ग	१)	८६ मार्कण्डेयपुराण भा० टी०	६)
६८ मुहूर्त चिन्तामणि भा० टी०	१)	८६ जैमिनीयाश्वमेधमूल	२)
६९ तर्क संग्रह मूल	-)	८७ गरुडपुराण भा० टी० प्रेतकल्प	१)
७० समासचक्र	-)		
७१ शब्दरूपावली	-)॥		



